योजना

ISSN-0971-8397

वर्ष: 45 अंक 2 मई 2001 मूल्य: 7 रुपये

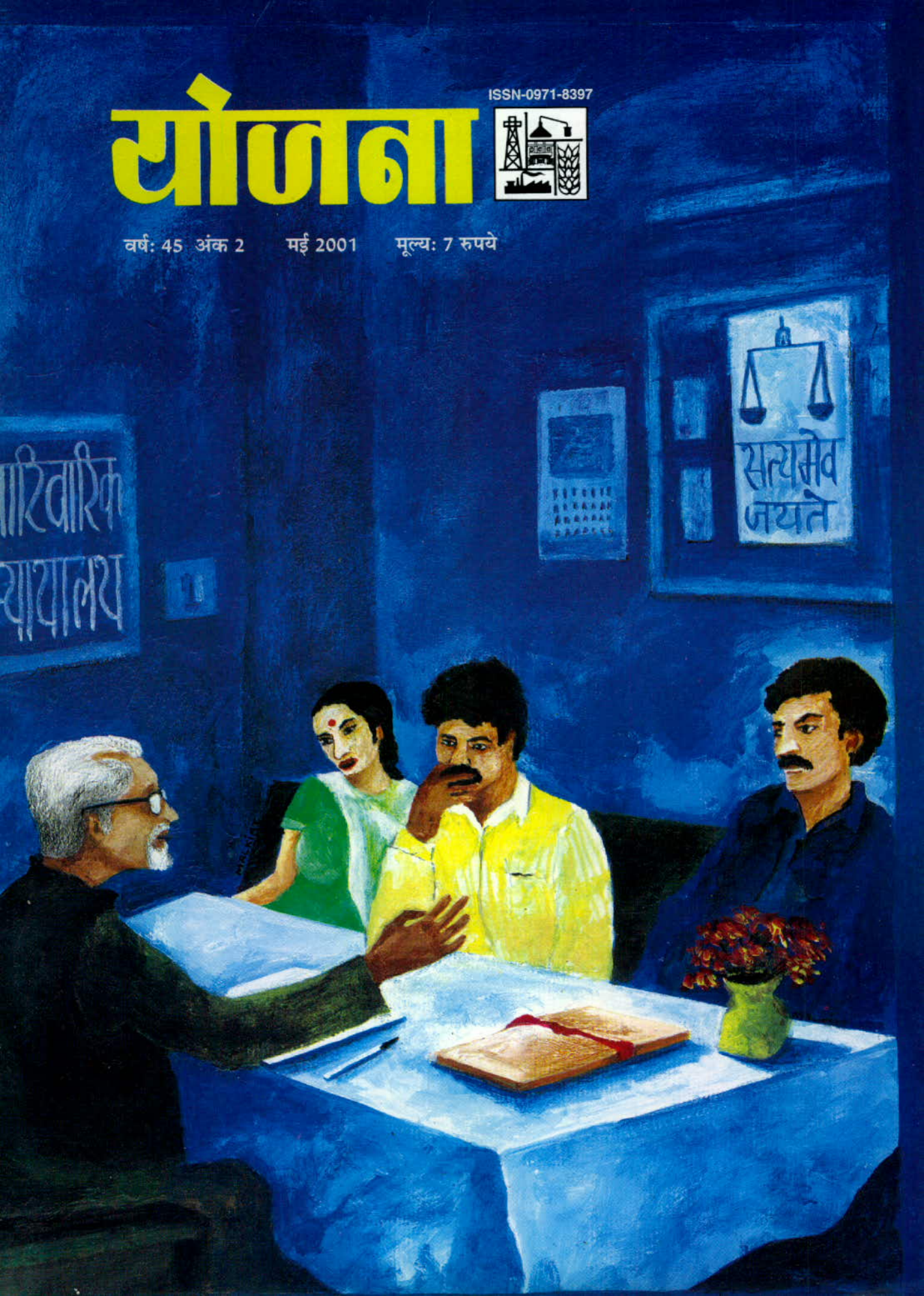

फिल्म प्रभाग को नौ राष्ट्रीय पुरस्कार

सूचना और प्रसारण मंत्रालय के फिल्म प्रभाग ने वर्ष 2001 के लिए गैर-फीचर फिल्म खंड में नौ राष्ट्रीय पुरस्कार जीते हैं। फिल्म प्रभाग को 1996 में चार, 1997 में तीन और 1998 में 12 राष्ट्रीय पुरस्कार मिले थे। इस वर्ष पुरस्कृत फिल्मों में जोशी जोसेफ द्वारा निर्देशित फिल्म 'वियरिंग द फेस' को खोजी फिल्म श्रेणी में सर्वश्रेष्ठ फिल्म पुरस्कार मिला है। इस फिल्म में मणिपुर के रिक्शाचालकों के मुखोटों के पीछे के चेहरों को समझने की कोशिश की गई है। सर्वोत्तम कला/सांस्कृतिक फिल्म श्रेणी में 'ट्राइबल वुमेन आर्टिस्ट' को पुरस्कार मिला है। इस फिल्म का निर्देशन श्री ब्रज भूषण ने किया है। फिल्म में पारंपरिक रूप से बनाए गए चित्रों, रेखांकनों और रेखाचित्रों के माध्यम से बिहार के हजारीबाग जिले की आदिवासी महिलाओं की सृजनशीलता का चित्रण किया गया है। श्री रवि जाधव की फिल्म 'द लैंडस्केप' को सर्वश्रेष्ठ कार्टून फिल्म का पुरस्कार दिया गया है। 'वेदिक मैथमेटिक्स' को सर्वोत्तम विज्ञान फिल्म श्रेणी में, 'इनफिल्ट्रेट्स' को सामाजिक विषय पर बनी सर्वोत्तम फिल्म का, 'फ्राम द लैड ऑफ बुद्धिज्म टू द लैंड आफ बुद्धा' को इतिहास के पुनर्निर्माण/संकलन श्रेणी में सर्वश्रेष्ठ फिल्म का तथा 'महानंदा' को सर्वश्रेष्ठ परिवार कल्याण फिल्म का पुरस्कार प्रदान किया गया है। 'न्यूज मैगजीन नम्बर 438-तुलसी' को सर्वश्रेष्ठ शैक्षिक/प्रेरक फिल्म तथा 'न्यूज मैगजीन नम्बर 424-वर्मि कल्चर' को सर्वोत्तम कृषि फिल्म का पुरस्कार प्रदान किया गया है।

योजना

योजना और विकास को समर्पित भारत
के नव-निर्माण की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 45 अंक 2 | मई, 2001 | वैशाख-ज्येष्ठ, शक संवत् 1923

प्रधान संपादक
सुभाष सेतिया
सहायक संपादक
अंजनी भूषण
उप संपादक
ललिता खुराना
संपादकीय कार्यालय
कमरा नं. 538 ए, योजना भवन, संसद मार्ग,
नई दिल्ली-110 001
दूरभाष : 3710473, 3717910
3715481/2510, 2508, 2566

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी
विज्ञापन एवं वितरण प्रबंधक
प्रकाश चन्द्र आहूजा
आवरण : **मल्कियत सिंह**

'**यो**जना' हिन्दी के अतिरिक्त **असमिया, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगू** तथा **उर्दू** भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। नई सदस्यता, सदस्यता के नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें :-

विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक IV, लेवल VII, आर.के. पुरम,
नई दिल्ली-110 066 टेलीफोन : 6105590

चंदे की दरें
वार्षिक : 70 रु.; द्विवार्षिक : 135 रु.; त्रैवार्षिक 190 रु.

इस अंक में

निर्यात-आयात नीति 2001-2002; मात्रात्मक प्रतिबंध हटे		2
• दूसरी पीढ़ी के आर्थिक सुधार	नवीन पंत	6
• पारिवारिक न्यायालय : एक अभिनव कदम	विनोद सिरोलिया	10
• विकास एवं पर्यावरण नीति	प्रकाश चन्द्र शुक्ल	13
• इक्कीसवीं सदी में उच्च शिक्षा की चुनौतियां	अधिकेश राय	17
• आर्थिक विकास एवं मानव मूल्य	पी.के. वार्ष्णेय अभय कुमार	22
• नवगठित उत्तरांचल राज्य— महिला केंद्रित विकास की आवश्यकता	दलीप सिंह	26
• बाल श्रमिकों के जीवन के कुछ पहलू	नीरज दूबे	29
• विकास प्रक्रिया में सूचना के अधिकार का महत्व	सुरेन्द्र कटारिया	33
• महिलाओं का बढ़ता वर्चस्व	रमेश चन्द्र पारीक	36
• ग्रामीण बेरोजगार—नए विकल्प	आई.सी. श्रीवास्तव	39
• स्वास्थ्य-चर्चा : 'बायोकैमिक' द्वारा अपनी चिकित्सा आप करें		43
• नए प्रकाशन		46

पाठकों से

'योजना' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने हैं। अतः यह जरूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों से सम्बद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो।

पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था मौजूद मात्रात्मक प्रतिबंध हटे

वर्ष 2001-2002 की निर्यात-आयात नीति की घोषणा करते हुए वाणिज्य और उद्योग मंत्री श्री मुरासोली मारन ने विश्वास व्यक्त किया कि 715 अन्य मदों पर से मात्रात्मक प्रतिबंध हटाकर हम जो विश्व के अन्य सब देशों के साथ शामिल हो रहे हैं, उससे वर्ष 2004 तक अपने निर्यात में 18 प्रतिशत की अपेक्षित वृद्धि लाने में हम सफल हो सकेंगे और सुरक्षा उपायों में कोई ढील नहीं आने दी जाएगी।

भारत ने आज शेष 715 मदों पर से मात्रात्मक प्रतिबंध हटा लिए हैं और इसके साथ ही 1990 के दशक से आरंभ मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने की प्रक्रिया पूरी हो गई है। दरअसल विश्व में इस समय केवल चार ही देश ऐसे हैं जहां मात्रात्मक प्रतिबंध लागू हैं। केन्द्रीय वाणिज्य और उद्योग मंत्री श्री मुरासोली मारन ने वर्ष 2001-2002 की निर्यात-आयात नीति की घोषणा करते हुए कहा कि हम ऐसे देशों की इस बिरादरी से निकलने और विश्व के सभी देशों के साथ शामिल होने के लिए शेष 715 मदों से भी मात्रात्मक प्रतिबंध हटा रहे हैं और कोटा राज के बचे-खुचे अवशेषों को भी अलविदा कह रहे हैं। टैरिफों में समायोजन, सुरक्षा उपायों के इस्तेमाल और डम्पिंग विरोधी शुल्कों को लागू करने जैसे संस्थागत उपायों के जरिए पर्याप्त सुरक्षा उपाय यद्यपि पहले ही से मौजूद हैं, लेकिन इन सब उपायों के बावजूद किसी तरह की ढील नहीं आने दी जाएगी। उन्होंने घोषणा की कि सरकार आम जनता के लिए महत्वपूर्ण 300 संवदेनशील मदों के बारे में आंकड़े एकत्र करने, संयोजित करने और उनका विश्लेषण करने के लिए एक स्थाई ग्रुप गठित कर रही है, जिसमें वाणिज्य सचिव, राजस्व सचिव, लघु उद्योग सचिव और पशुपालन विभाग के सचिव को शामिल किया जाएगा। ऐसी मदों के आयात की स्थिति के बारे में हर महीने मीडिया में एक विवरण प्रकाशित किया जाएगा। निर्यात नीति संबंधी एक प्रमुख उपाय के रूप में श्री मारन ने कृषि निर्यातों को प्राथमिकता देने की घोषणा की और कहा कि इससे भारत विश्व कृषि व्यापार के संभावित उदारीकरण के फायदे उठाने की स्थिति में पहुंच जाएगा। सरकार कृषि आर्थिक जोनों के जरिए राज्यों के कृषि निर्यात उपायों में मदद करेगी जिसके लिए विश्व मूल्यों, मांग, गुणवत्ता मानकों आदि के बारे में सूचना संबंधी महत्वपूर्ण कमियों को पूरा किया जाएगा क्योंकि इन्हीं के कारण देश के कई प्रमुख कृषि क्षेत्रों को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में पूरी तरह भाग

लेने में रुकावट आती रही है। शुल्क मुक्ति योजना और निर्यात सम्वर्द्धन पूंजीगत माल जैसी निर्यात-आयात योजनाएं शीघ्र ही कृषि क्षेत्र पर भी लागू हो जाएगी। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि हमारे किसान मौके का फायदा उठाएंगे और हम कृषि आर्थिक क्षेत्रों और प्रस्तावित कृषि आयात नीति में खेत-से-बंदरगाह के दृष्टिकोण के साथ कृषि संबंधी अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में अपनी छाप छोड़ने में कामयाब होंगे।

पांच साल के नीतिगत ढांचे के (1997-2002) के अंतिम वर्ष, 2001-2002 की निर्यात-आयात नीति में बाजार-पहुंच संबंधी पहल के रूप में एक और महत्वपूर्ण कदम की घोषणा की गई है। इस पहल पर उत्पाद और देश संबंधी विनिर्देशों के साथ केन्द्रित रूप से अमल करने की कोशिश की जाएगी। योजना आयोग द्वारा मंजूर की गई इस योजना के तहत सरकार उद्योगों की अनुसंधान और विकास, बाजार अनुसंधान, विशिष्ट बाजार और उत्पाद अध्ययनों, चुने हुए देशों में माल भंडारण और खुदरा विक्रय ढांचों तथा मीडिया विज्ञापनों और क्रेता-विक्रेता सम्मेलनों के जरिए प्रत्यक्ष विपणन संवर्धन के मामलों में मदद करेगी। इस समय देश के सामने सबसे बड़ी चुनौती निर्यात बढ़ाने की है ताकि वर्ष 2004-2005 तक विश्व बाजार में हमारा हिस्सा कम-से-कम एक प्रतिशत हो सके। वर्ष 2004 में कुल विश्व निर्यात के 7.5 लाख करोड़ अमेरिकी डालर का होने की उम्मीद है और इसमें अपना हिस्सा एक प्रतिशत करने के लिए हमें मौजूदा 43 अरब डालर के निर्यात को बढ़ाकर 75 अरब डालर का करना होगा। इसका मतलब यह है कि हमें निर्यात में 18 प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी और यह वृद्धि हम कर सकते हैं।

वर्ष 2004 में कुल विश्व निर्यात के 7.5 लाख करोड़ अमेरिकी डालर का होने की उम्मीद है और इसमें अपना हिस्सा एक प्रतिशत करने के लिए हमें मौजूदा 43 अरब डालर के निर्यात को बढ़ाकर 75 अरब डालर का करना होगा। इसका मतलब यह है कि हमें निर्यात में 18 प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी और यह वृद्धि हम कर सकते हैं।

निर्यातकों की सुविधा और उनके कारोबार में समय और लागत बचाने के उद्देश्य से निर्यात-आयात नीति की योजनाओं में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तनों की भी घोषणा की गई है। इनमें वार्षिक अग्रिम लाइसेंस योजना को मजबूत बनाना शामिल है, जिसके लिए वार्षिक अग्रिम लाइसेंस के लिए पात्रता पिछले साल के निर्यातों के मूल्य के 125 प्रतिशत से बढ़ाकर 200 प्रतिशत की जा रही है। इसके अलावा ऐसे मामलों में भी वार्षिक अग्रिम लाइसेंस की सुविधा प्रदान की जाएगी जहां इनपुट और आउटपुट संबंधी कोई मानक मापदंड नहीं है। मान्य निर्यातों और मध्यवर्ती आपूर्तियों को भी वार्षिक अग्रिम लाइसेंस सुविधा के दायरे में लाया गया है। समाप्त हो चुके उन अग्रिम लाइसेंसों को फिर से वैध करने की भी व्यवस्था की गई है जिनमें निर्यात दायित्व 6 महीने से पूरा हो चुका है। एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन शुल्कमुक्त पुनः पूर्ति प्रमाणपत्रों की वैधता के बारे में किया गया है जिसे 12 से बढ़ाकर 18 महीने कर दिया गया है। सांचों आदि के निर्यात की अनुमति दी गई है जो लाइसेंस के पूरे लागत, बीमा, भाड़ा मूल्य (सी.आई.एफ.) मूल्य तक होगी। पहले यह 20 प्रतिशत तक सीमित थी। इससे प्लास्टिक, चमड़ा तथा अन्य क्षेत्रों को मदद मिलेगी। एक और परिवर्तन विशेष आर्थिक जोनों के मामले में किया गया है। छोटी-सी नकारात्मक सूची को छोड़कर स्वतः अनुमोदन व्यवस्था के जरिए प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति दी गई है जिसके लिए लघु उद्योग क्षेत्र के वास्ते आरक्षित मदों के लिए इकाई स्थापित करने के बारे में लाइसेंस की जरूरत नहीं होगी। इसके अलावा विशेष आर्थिक क्षेत्रों में इकाईयों को 365 दिनों में अपनी बिक्री राशि को वापस लाने और

शत-प्रतिशत राशि को विदेशी मुद्रा अर्जक विदेशी मुद्रा खाते में रखने की अनुमति दी गई है।

आवेदनों को इलेक्ट्रानिक तौर पर दाखिल करने और उनकी ऑन लाइन प्रॉसेसिंग के बारे में कहा गया है कि इसका उद्देश्य स्टेट्स धारकों और ग्रीन कार्ड धारकों जैसे ज्ञात निर्यातकों को कम-से-कम 24 घंटे के भीतर लाइसेंस जारी करना है। आज देश भर में इन समय-सीमाओं के भीतर 97.5 प्रतिशत लाइसेंस जारी किए जा रहे हैं। पुणे और बंगलौर में तो दोपहर 12 बजे तक प्राप्त आवेदनों पर उसी दिन शाम तक लाइसेंस जारी कर दिए जाते हैं। राज्यों को निर्यात में सहायता देने की योजना का उल्लेख करते हुए श्री मारन ने बताया कि चालू बजट में लगभग 100 करोड़ रुपये के प्रावधान से एक शुरुआत की गई है जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय निर्यात प्रयासों में राज्य सरकारों को शामिल करना है।

प्रक्रियाएं सरल बनाई गई हैं, विदेश व्यापार महानिदेशालय और निर्यातकों के बीच बातचीत में लगने वाले समय को कम करने के लिए समितियों की संख्या 9 से घटाकर 4 कर दी गई हैं तथा अन्य मामलों में सुचारू व्यवस्था की गई है। राजस्व विभाग में भी ऐसे ही कदम उठाए गए हैं जिनमें स्टेट्स धारकों और ग्रीन कार्ड धारकों को स्वत: सीमा शुल्क संबंधी मंजूरी देना, वास्तविक सत्यापन और लदान पत्रों के चयन की प्रतिशत में कमी, जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए सीमा शुल्क विभाग द्वारा रसीद जारी करना, डी.ई.पी.बी. और डी.एफ.आर.सी. का त्वरित सत्यापन, और विदेश व्यापार महानिदेशालय द्वारा जारी नो-बांड आधार पर अग्रिम/इ.पी.सी.जी. लाइसेंसों का विमोचन शामिल है।

निर्यातकों की निर्यात ऋण संबंधी लागत को कम करने, धारा 80 दे एच.एच.सी. लाभों को फिर से चरणबद्ध करने, बंदरगाहों और हवाई अड्डों की भीड़ कम करने, सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क के ढांचे में इलेक्ट्रोनिक और हार्डवेयर क्षेत्र संबंधी अनियमितताओं को दूर करने और निर्यात उत्पादों के लौह और इस्पात अंश पर आधारित रेसिडुअल ड्राबैक के लिए इंजीनियरी क्षेत्र की मांग

मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने का अर्थ आयात के रास्ते पूरी तरह खोलना नहीं

मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाने का अर्थ यह नहीं है कि रास्ते पूरी तरह खोल दिए जाएं। एक प्रभुसत्तापूर्ण देश के रूप में अपने नागरिकों की सुरक्षा तथा जैव सुरक्षा संबंधी अपनी चिंताओं पर ध्यान देना हमारा कर्त्तव्य है। वर्ष 2001-2002 की आयात-निर्यात नीति में इस दिशा में आयातों के लिए किए गए उपाय निम्नलिखित हैं—

1. गेहूं, चावल, मकई, पेट्रोल, डीजल, ए.टी.एफ. और यूरिया जैसी मदों के आयात की अनुमति केवल निर्धारित राज्य व्यापार उद्यमों के माध्यम से होगी, जो गैट की धारा 17 के अनुसार वाणिज्यिक सिद्धांतों के आधार पर काम करेंगे।
2. पौधों और पशुजन्य सभी मूल उत्पादों के आयात के लिए कृषि मंत्रालय से आयात परमिट लेने होंगे। इनके लिए पहले स्वच्छता और पादप-स्वच्छता उपायों और प्रावधानों पर आधारित आयात जोखिम विश्लेषण किया जाएगा।
3. इसके अतिरिक्त सड़क सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए नई और पुरानी कारों के आयात के लिए शर्तें निर्धारित की जा रही हैं। विदेशी शराब, डिब्बाबंद खाद्य सामग्री और चाय अपशिष्टों के आयात पर स्वास्थ्य और स्वच्छता संबंधी पहले से ही मौजूद घरेलू विनियमों की शर्त लागू की जा रही है।

जैसी निर्यातकों की पुरानी मांगों के सभी मुद्दों पर वित्त मंत्री तथा अन्य उचित अधिकारियों के साथ बातचीत की गई है और इसका अच्छा परिणाम निकलेगा, यह उम्मीद है।

कृषि के बारे में विश्व व्यापार संगठन समझौते और भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसके प्रभाव के बारे में बताया गया कि यह उरुग्वे चक्र समझौतों का हिस्सा है जो 1986-1993 के दौरान किए गए थे और जिन पर अप्रैल 1994 में भारत सहित 120 देशों ने मराकेश में हस्ताक्षर किए थे। समझौता पहली जनवरी 1995 से प्रभावी हो गया था और यह इसके क्रियान्वयन का छठा वर्ष है। इस समझौते की वजह से हमारे ऊपर अनुसंधान, कीट एवं रोग नियंत्रण, विपणन तथा सम्वर्द्धन सेवाओं और विभिन्न ढांचागत समर्थन सेवाओं के लिए मौजूदा सब्सिडियों को कम करने का कोई दबाव नहीं है। इससे हमारी मौजूदा सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर भी कोई असर नहीं पड़ता। भारत ने अन्य व्यापार सहयोगियों को न्यूनतम बाजार पहुंच के अवसर उपलब्ध कराने का भी कोई जिम्मा नहीं लिया है। उरुग्वे चक्र पर हस्ताक्षर करते समय यह तय हुआ था कि उदारीकरण के बारे में आगे चर्चा पहली जनवरी 2000 से शुरू होगी और ऐसी अनिवार्य बातचीत विश्व व्यापार संगठन में शुरू हो चुकी है। इन वार्ताओं के लिए भारत के प्रस्ताव राज्यों, किसानों के प्रतिनिधियों, राजनीतिक पार्टियों आदि के साथ गहन विचार-विमर्श के बाद तैयार किए गए थे। इस बुनियादी बात का सरकार को पूरी तरह ज्ञान है कि अगर हमारी कृषि व्यवस्था गड़बड़ा जाती है तो हमारी अर्थव्यवस्था और सामाजिक ताने-बाने में कोई भी चीज सही नहीं रहेगी। खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण लोगों के लिए रोजगार सुरक्षा की दिशा में सरकार कोई कसर उठा नहीं रखेगी। ❑

(पत्र सूचना कार्यालय से साभार)

निर्यात दायित्वों की पूर्ति के लिए समय बढ़ाया गया

निर्यात संबंधी दायित्वों को पूरा करने में विफल रहने वाले पुराने मामलों के बारे में बैंक गारंटी के आधार पर निर्यात दायित्वों को पूरा करने के लिए और समय देने का फैसला किया गया है। वर्ष 2001-2002 की आयात-निर्यात नीति की घोषणा करते हुए केन्द्रीय वाणिज्य और उद्योग मंत्री श्री मुरासोली मारन ने कहा कि यह फैसला एक विशेष समिति की सिफारिशों के आधार पर किया गया है जो निर्यात संबंधी दायित्वों को पूरा करने में विफल रहने वाले सभी पुराने मामलों पर विचार करने और इन विफलताओं को, जहां तक संभव हो, नियमित करने के तरीके सुझाने के लिए गठित की गई थी। इसका उद्देश्य नई सहस्राब्दी में अतीत की समस्याओं में उलझे बिना निर्यातकों को नए सिरे से कारोबार शुरू करने में मदद देना था। इससे लगभग 80 प्रतिशत पुराने मामलों के सुलझने की आशा है।

दूसरी पीढ़ी के आर्थिक सुधार

नवीन पंत

वित्त मंत्री यशवंत सिन्हा ने अपने बजट में राजकोषीय घाटा, ब्याज की दर और सरकारी खर्च में कमी लाने, लघु उद्योग क्षेत्र के लिए आरक्षित वस्तुओं में से 14 वस्तुओं को हटा देने और सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के निजीकरण में तेजी लाने की घोषणा की है। वह श्रम कानूनों में परिवर्तन के भी पक्षधर हैं। उन्होंने बिजली क्षेत्र को संकट से उबारने के भी कुछ उपाय किए हैं। अगर उनके ये प्रयास सफल होते हैं तो देश में पूंजी निवेश बढ़ेगा। परिणामस्वरूप विकास दर भी बढ़ेगी और देश दृढ़ता से प्रगति पथ पर अग्रसर होगा।

सरकार का बजट केवल उसकी आय-व्यय का विवरण नहीं होता। वह राष्ट्रीय आर्थिक नीतियों को प्रकट करने का मुख्य माध्यम होता है। इसके साथ ही वह देश के सामने उत्पन्न आर्थिक चुनौतियों का सामना कैसे किया जाएगा, विकास दर को कैसे बढ़ाया जाएगा और सभी वर्गों की जनता के जीवन-स्तर में किस प्रकार सुधार लाया जाएगा, इसे स्पष्ट करने का भी दस्तावेज होता है।

बजट तैयार करने का काम सदैव कठिन और चुनौती भरा होता है। इस वर्ष अनेक कारणों से यह अधिक चुनौतीपूर्ण हो गया था। भुज के विनाशक भूकम्प ने सरकार के लिए भूकम्प पीड़ितों की सहायतार्थ अतिरिक्त साधन जुटाना अनिवार्य कर दिया था। ग्रामीण क्षेत्रों और देश के समग्र विकास के लिए कृषि और योजना खर्च में वृद्धि आवश्यक थी। लगातार तीसरे वर्ष विकास दर में कमी आना चिंता का विषय था। औद्योगिक उत्पादन, विशेष रूप से पूंजीगत माल के उत्पादन में कमी, कृषि उत्पादन का लगभग स्थिर रहना और बेरोजगारी की समस्या भी परेशानी के विषय थे। पहली अप्रैल, 2001 से सभी वस्तुओं के मात्रात्मक आयात पर लगे प्रतिबंधों की समाप्ति भी साधारण चुनौती न थी।

दस वर्ष पूर्व 1991 में आर्थिक सुधार शुरू किए गए थे। इसके बाद अर्थव्यवस्था औसतन 6.4 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से बढ़ी है। इससे पहले औसत विकास दर 3-4 प्रतिशत प्रति वर्ष थी। कुछ अर्थशास्त्री व्यंग्य से इसे हिन्दू विकास दर भी कहते थे। आर्थिक सुधारों के बाद विकास दर में तेजी आई। गरीबी-रेखा से नीचे रहने वालों की संख्या में भी 10 प्रतिशत की कमी आई। जो 1993-94 में 36 प्रतिशत थी यानी वह अब मात्र 26 प्रतिशत रह गई है।

विकास दर को 9-10 प्रतिशत तक लाए बिना गरीबी के अभिशाप से शीघ्र मुक्ति नहीं पाई जा सकती। प्रधानमंत्री और देश के कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना है कि आर्थिक क्षेत्र में कुछ सुधार करके 9-10 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त की जा सकती है। 9 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त करना कठिन अवश्य है लेकिन असंभव नहीं है। चीन की विकास-दर 10-11 प्रतिशत है। पिछले वर्ष चीन में 40 अरब डालर का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हुआ था जबकि हमारे यहां केवल 2 अरब डालर का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हुआ था।

क्या कारण है कि जहां अन्य देश 100-200 अरब डालर प्रत्यक्ष विदेशी निवेश आकृष्ट कर रहे हैं, हमें नगण्य विदेशी निवेश से संतोष करना पड़ता

है? अगर भारत की चीन से तुलना की जाए तो जहां चीन में एकदलीय कम्युनिस्ट शासन है, भारत में लोकतंत्र है। भारत में अंग्रेजी जानने-समझने वाले लोग रहते हैं। यहां कानून का शासन है। फिर भी विदेशी पूंजी निवेश चीन में अधिक होता है।

वित्त मंत्री इस स्थिति को बदलना चाहते हैं। अपने इस प्रयास को उन्होंने 'दूसरी पीढ़ी के सुधार' नाम दिया है। इन सुधारों का उद्देश्य राजकोषीय घाटे को कम करना, ब्याज दरों में कमी, सरकारी खर्च में कमी, निजीकरण में तेजी, श्रम कानूनों में संशोधन और बिजली क्षेत्र को संकट से उबार कर लाभप्रद बनाना है। इससे देश में पूंजी निवेश बढ़ेगा, रोजगार के अवसर बढ़ेंगे, उद्योग विदेशी प्रतिस्पर्धा का सामना कर सकेंगे और विकास दर में वृद्धि होगी। पहली पीढ़ी के आर्थिक सुधार आसान थे। उनमें से अधिकांश को सरकारी आदेशों से लागू किया जा सका। दूसरी पीढ़ी के सुधारों को लागू करने के लिए पुराने कानूनों में संशोधन करना होगा और नए कानून बनाने होंगे जो अपेक्षाकृत कठिन होगा।

राजकोषीय घाटे का ब्याज की दरों, मुद्रास्फीति और आर्थिक स्थिरता के साथ घनिष्ठ संबंध है। वित्त मंत्री पिछले वित्त वर्ष (2000-2001) के राजकोषीय घाटे को निर्धारित 5.1 प्रतिशत तक सीमित रखने में सफल रहे हैं। अगले वर्ष उन्होंने इसे 4.7 प्रतिशत तक रखने का प्रावधान किया है। सरकार राजकोषीय घाटे को 2005 तक 2 प्रतिशत तक लाने के लिए वचनबद्ध है। इस समय राजकोषीय घाटा 1,16,000 करोड़ रुपये है। सन 2003 तक इसमें 60,000 करोड़ रुपये की कमी हो जाएगी। राष्ट्रीय बचत में वृद्धि से निवेश बढ़ेगा, विकास दर बढ़ेगी। कर व्यवस्था का आधार बढ़ने से राजकोषीय घाटे में और कमी आएगी और बजट अधिशेष दिखाना शुरू कर देगा।

सरकार ने 6 विभागों और मंत्रालयों में कर्मचारियों की संख्या में कमी करने का निर्णय किया है। वित्त मंत्री ने सरकारी कर्मचारियों की संख्या में कटौती की शुरुआत अपने ही मंत्रालय से करने का निश्चय किया है। जुलाई 2001 तक निदेशकों के 44 पद, मुद्रा और सिक्का विभाग में 1,674 पद और राष्ट्रीय बचत संगठन में 1,166 पदों की कटौती प्रस्तावित है।

हमारी अर्थव्यवस्था अभी भी कृषि पर आधारित है लेकिन कृषि क्षेत्र में रोजगार के अधिक अवसर पैदा नहीं किए जा सकते। वे केवल उद्योग क्षेत्र में किए जा सकते हैं। अनेक कारणों से जिनमें ब्याज की अधिक दरें प्रमुख हैं, हमारे उद्योगों की लागत अधिक आती है। वे अन्य देशों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकते। जहां अन्य देशों में ब्याज दरें 5-6 प्रतिशत प्रति वर्ष है, हमारे यहां वे 10-15 प्रतिशत हैं। उद्योगों को नए उद्यम लगाने के लिए इससे भी अधिक ब्याज देना पड़ता है। वित्त मंत्री ने अपने बजट में छोटी बचतों, डाकघर सावधि जमा, भविष्य निधि और करार बचतों में ब्याज दरों में 1.5 प्रतिशत की कमी की घोषणा की। वित्त मंत्री की इस घोषणा के बाद रिजर्व बैंक ने भी ब्याज दरों में 0.5 प्रतिशत कमी की घोषणा की है। रिजर्व बैंक द्वारा बैंक दर में कमी किए जाने का अर्थ है अब बैंकों को घटी दरों पर ऋण मिल सकेगा और वे लोगों को आवास निर्माण, उद्योग और व्यापार के लिए कम ब्याज पर ऋण दे सकेंगे।

वित्त मंत्री ने सरकारी खर्च में कमी लाने के लिए सरकारी कर्मचारियों की संख्या में कमी करने और अनुत्पादक खर्च में कटौती करने का फैसला किया है। प्रति वर्ष 3 प्रतिशत सरकारी कर्मचारी सेवानिवृत्त होते हैं। सरकार ने फैसला किया है कि इनके स्थान पर केवल एक प्रतिशत कर्मचारी भर्ती किए जाएंगे। इस प्रकार पांच वर्ष में सरकारी कर्मचारियों की संख्या में 10 प्रतिशत की कमी हो जाएगी। इसी के साथ सरकारी कर्मचारियों से लिए जाने वाले किराए में वृद्धि कर दी गई है और उन्हें मिलने वाली सुविधाओं में कुछ कटौती की गई है।

सरकार ने 6 विभागों और मंत्रालयों में कर्मचारियों की संख्या में कमी करने का निर्णय किया है। वित्त मंत्री ने सरकारी कर्मचारियों की संख्या में कटौती करने की शुरुआत

अपने ही मंत्रालय से करने का निश्चय किया है। जुलाई 2001 तक निदेशकों के 44 पद, मुद्रा और सिक्का विभाग में 1,674 पद और राष्ट्रीय बचत संगठन में 1,166 पदों की कटौती की जाएगी।

सरकार अतिरिक्त घोषित किए गए कर्मचारियों का एक पूल बनाएगी। इन कर्मचारियों को प्रशिक्षित करके अन्य कामों पर लगाया जाएगा। सरकार कुछ वर्ग के कर्मचारियों के लिए स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना भी तैयार कर रही है।

सरकार सरकारी कंपनियों के निजीकरण में तेजी लाना चाहती है। उसने वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान विनिवेश से 12,000 करोड़ रुपये प्राप्त करने का लक्ष्य रखा है। पिछले वर्ष विनिवेश से 10,000 करोड़ रुपये प्राप्त करने का लक्ष्य था लेकिन सरकार इस मद में केवल 2500 करोड़ रुपये प्राप्त कर सकी। पिछले अनुभव को देखते हुए यह संदेहजनक लगता है कि सरकार इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगी।

सरकार ने लघु उद्योग क्षेत्र के लिए आरक्षित वस्तुओं में से 14 को हटाने का फैसला इसलिए किया क्योंकि ये विदेशी मुद्रा अर्जित करते हैं। इन्हें अधिक पूंजी, अधिक तकनीकी जानकारी की जरूरत है। सरकार का मानना है इनके विस्तार की व्यापक संभावनाएं हैं। सरकार का कहना है कि वह सार्वजनिक क्षेत्र के 27 उद्यमों में विनिवेश के प्रस्तावों को मंजूरी दे चुकी है। इनमें वि५रा संचार निगम, एयर इंडिया, मारुति उद्योग जैसे उद्यम शामिल हैं। राजकोषीय घाटे को नियंत्रण में रखने के लिए अब सरकार इस काम में तेजी लाना चाहती है। विनिवेश से प्राप्त राशि में से 7000 करोड़ रुपये सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों को पुनर्गठन सहायता, श्रमिकों को सुरक्षा कवच और सरकार के ऋण बोझ को कम करने पर खर्च किए जाएंगे। शेष 5000 करोड़ रुपये सामाजिक और बुनियादी सुविधा क्षेत्र में खर्च किए जाएंगे। वर्ष 1998 से अब तक सरकार लाभप्रद और लाभप्रद हो सकने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के 23 कारखानों को, जिनमें 'सेल' और एच.एम.टी. शामिल हैं, पुनर्गठन सहायता के रूप में 13,000 करोड़ रुपये दे चुकी है।

सरकार ने 1000 से कम श्रमिकों वाले कारखानों के लिए 'ले आफ' और छंटनी करना आसान बना दिया है। जहां एक ओर 'ले आफ' और छंटनी आसान बना दी गई है, दूसरी ओर श्रमिकों के हितों की रक्षा करने और मनमाने तरीके से छंटनी को रोकने के लिए श्रमिकों को मिलने वाली मुआवजे की राशि, जो पहले प्रत्येक वर्ष की सेवा के लिए 15 दिन का वेतन थी, अब बढ़ाकर 45 दिन का वेतन कर दी है। इसी के साथ ठेके पर कर्मचारियों का रखना सुगम बना दिया गया है। वित्त मंत्री ने कहा है कि श्रम मंत्री संसद के वर्तमान अधिवेशन में औद्योगिक विवाद अधिनियम और ठेका मजदूर अधिनियम में उपर्युक्त संशोधन करेंगे। अभी तक 100 से कम मजदूरों वाले कारखाने को 'ले आफ' और 'छंटनी' की सुविधा उपलब्ध थी। वर्तमान कानून के अंतर्गत ठेके पर काम करने वाले ग्रामीण क्षेत्रों के मजदूरों को कुछ ही समय बाद स्थायी बना दिया जाता है। मालिकों का कहना है कि वर्तमान औद्योगिक कानूनों से उन्हें अकुशल मजदूरों को निकालने में अड़चन आती है। इसका उत्पादकता पर असर पड़ता है और भारतीय माल अंतर्राष्ट्रीय मंडियों में प्रतियोगिता में ठहर नहीं पाता। उद्योगीकरण के लिए बिजली आवश्यक है। इस समय देश के अधिकांश राज्य बिजली की कमी की समस्या से पीड़ित है। बिजली की इस कमी को दूर करने और बिजली की निरंतर बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए हमें अगले 10 वर्षों के दौरान 1,00,000 मैगावाट अतिरिक्त बिजली पैदा करनी होगी। इसके लिए हमें 8,00,000 करोड़ रुपये चाहिए। सरकार के पास बिजली क्षेत्र में निवेश के लिए इतना पैसा नहीं है। अत: इसमें से आधी बिजली का उत्पादन निजी क्षेत्र को करना पड़ेगा।

इस समय राज्य बिजली बोर्डों की हालत अच्छी नहीं है, उन्हें केन्द्रीय बिजली प्रतिष्ठानों को 25,000 करोड़ रुपये देने हैं। इसके अलावा राज्य प्रति वर्ष बिजली बोर्डों को 36,000 करोड़ रुपये की छिपी या अप्रत्यक्ष सहायता देते हैं। बिजली के पारेषण और खपत में बड़े पैमाने में बिजली की चोरी की जाती है। जब तक राज्य बिजली बोर्डों को

लाभप्रद नहीं बनाया जाता, देश में बिजली का उत्पादन नहीं बढ़ सकता।

वित्त मंत्री ने केन्द्रीय क्षेत्र में बिजली के लिए वर्तमान वित्त वर्ष के बजट में 10,030 करोड़ रुपये की व्यवस्था करने के अतिरिक्त बिजली क्षेत्र में सुधार के कुछ उपायों की घोषणा की। हर्ष का विषय है कि बजट के तत्काल बाद प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में राज्यों के बिजली मंत्रियों के सम्मेलन में आम सहमति हो गई है। आशा है कि इस सहमति के बाद बिजली क्षेत्र में सुधारों का मार्ग प्रशस्त होगा।

वित्त मंत्री ने उपर्युक्त के अलावा कृषि क्षेत्र को मिलने वाली ऋण सुविधा बढ़ाकर 51,500 करोड़ रुपये कर दी है। उन्होंने प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना और प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के आबंटन में भी वृद्धि कर दी है। उन्होंने विकास में विद्युतीकरण की भूमिका को स्वीकार करते हुए इस कार्य को उच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है। उन्होंने किसानों की उपज को लाने ले जाने पर लगे सभी प्रतिबंध समाप्त कर दिए हैं। इससे किसानों को अपनी उपज के उचित दाम नहीं मिल रहे थे। उन्होंने किसानों की उपज के परिरक्षण और भंडारण को बढ़ावा देने की घोषणा की है। इससे किसानों की आय में वृद्धि होगी।

वित्त मंत्री के निजीकरण और श्रम कानूनों में संशोधन का विरोध शुरू हो गया है। प्रमुख विपक्षी दल, कांग्रेस लाभ देने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों के निजीकरण का विरोध कर रही है। 'ले आफ' और 'छंटनी' के अंतर्गत अधिक मजदूरों को लाने का भी विरोध हो रहा है। ठेका मजदूर कानून का भी विरोध होगा। वित्त मंत्री को अपने सुधार कार्यक्रमों को लागू करने के लिए न केवल अपने सहयोगियों बल्कि विपक्ष के सहयोग की जरूरत पड़ेगी। इसके लिए उन्हें बड़ी सूझबूझ, बुद्धि और संयम से काम लेना होगा।

उन्हें सभी को समझाना होगा कि वैश्वीकरण देश के लिए एक सुखद परिवर्तन और सुनहरा अवसर है। हमें इस अवसर का पूरा लाभ उठाना चाहिए। इससे अनेक देशों की बंद मंडियों के द्वार हमारे लिए खुल जाएंगे। इसका पूरा लाभ पाने के लिए हमें अपनी उत्पादकता और प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ानी होगी, तैयार माल की गुणवत्ता सुधारनी होगी और उसकी लागत घटानी होगी। वित्त मंत्री ने इसका आधार तैयार कर दिया है। देखना यह है कि अब उद्योग व्यापार जगत से जुड़े लोग इससे कितना लाभ उठाते हैं। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पौध-किस्मों की डिजिटाइज्ड इन्वेन्ट्री

सरकार ने एक महत्वपूर्ण जैव-संसाधन परियोजना पर अर्थात पौधों की आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण किस्मों की डिजिटाइज्ड इन्वेन्ट्री बनाने पर काम शुरू कर दिया है। इस परियोजना पर 90 लाख रुपये व्यय होंगे और इसे पूरा करने में दो वर्ष लगेंगे। इस परियोजना का उद्देश्य मुख्य रूप से पौधों की उन किस्मों की सूची तैयार करना है जो विशेष उद्देश्यों को पूरा करने के लिए आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इन उद्देश्यों में औषधीय, एरोमेटिक या इमारती लकड़ी की प्रजातियां शामिल नहीं की गई हैं।

परियोजना के अन्य उद्देश्य हैं टैक्सोनोमी, जीव विज्ञान संबंधी सूचना का संकलन और किस्मों के विवरण का मूल्यांकन तथा विवरण में समरूपता की पहचान। इन किस्मों से तैयार किए जाने वाले उत्पाद, उनकी प्रोसेसिंग संबंधी तकनीक तथा उनके इस्तेमाल संबंधित जानकारी जमा करना, इन किस्मों की आर्थिक उपादेयता तथा इनसे तैयार माल की निर्यात और आयात संबंधी स्थिति का पता लगाना, और माल के लिए भावी बाजारों की खोज करना भी परियोजना के उद्देश्यों में शामिल है।

पारिवारिक न्यायालय एक अभिनव कदम

विनोद सुरोलिया

सामाजिक संगठनों, महिला संगठनों तथा विधि आयोग की 59वीं रिपोर्ट के मद्देनजर जनहित में केन्द्र सरकार ने वर्ष 1984 में पारिवारिक न्यायालय अधिनियम को मान्यता प्रदान की जिसके अंतर्गत दस लाख की आबादी पर एक पारिवारिक न्यायालय की स्थापना का प्रावधान किया गया। अपनी विशेषताओं के कारण आज ये न्यायालय परिवार की स्वतंत्रता, गरिमा एवं अस्मिता के सशक्त प्रहरी बन गए हैं। अंतर्राष्ट्रीय परिवार दिवस के अवसर पर प्रस्तुत है इस न्यायालय से संबंधित कुछ तथ्य।

व्यक्तिवाद, भौतिकवाद और औद्योगीकरण एवं पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण अदालतों में पारिवारिक विवादों की एक बाढ़-सी आ गई। दीवानी अदालतों में दाम्पत्य संबंधी झगड़ों का निपटारा होने में काफी धन और समय दोनों की बरबादी होती थी। इस कारण समाजसेवी संस्थाओं, महिला संगठनों, बुद्धिजीवियों और न्यायविदों ने यह मांग उठाई कि पारिवारिक विवाद अत्यंत नाजुक प्रकृति के होते हैं जिनके शीघ्र निस्तारण के लिए पारिवारिक अदालतों का गठन किया जाना चाहिए ताकि वैवाहिक पक्षकारों के मुकदमों का शीघ्र फैसला हो सके। केंद्र सरकार ने सामाजिक संगठनों, महिला संगठनों तथा विधि आयोग की 59वीं रिपोर्ट को दृष्टिगत रखते हुए जनहित में सन 1984 में पारिवारिक न्यायालय अधिनियम को मान्यता दी। इस अधिनियम के अंतर्गत राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से दस लाख की आबादी वाले शहर या कस्बे में पारिवारिक न्यायालय की स्थापना कर सकती है। यदि राज्य सरकार जनहित में उचित समझे तो उच्च न्यायालय के परामर्श से दस लाख से कम आबादी वाले शहर या कस्बे में पारिवारिक न्यायालय का गठन उच्च न्यायालय के परामर्श से कर सकती है।

भारत में सर्वप्रथम पारिवारिक न्यायालय की स्थापना गुलाबी नगर, जयपुर में की गई। इस न्यायालय ने पारिवारिक विवादों को निपटाने में एक राष्ट्रीय कीर्तिमान कायम किया जिसके परिणामस्वरूप राजस्थान में कोटा, बीकानेर, अजमेर, जोधपुर तथा उदयपुर में पारिवारिक न्यायालय खोले गए। पारिवारिक न्यायालय को वैवाहिक शून्यता, न्यायिक पृथक्करण, तलाक, दाम्पत्य अधिकारों की प्रतिस्थापना, पति-पत्नी से संबंधित झगड़े, किसी भी आदमी के धार्मिक विवाद, अवयस्क का संरक्षण या अभिरक्षा, बच्चे, पत्नी और माता-पिता के भरण-पोषण संबंधी विवादों को सुनने का अधिकार है।

पारिवारिक न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत न्यायालय के पीठासीन अधिकारी पर यह दायित्व अधिरोपित किया गया है कि वह मुकदमे की प्राथमिक अवस्था में पक्षकारों के मध्य आपसी समझौता कराकर मुकदमे का निस्तारण करे। पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की भावना को ध्यान में रखते हुए न्यायाधीश पक्षकारों को सर्वप्रथम समझाने का प्रयास करता है कि पति-पत्नी एक ही गाड़ी के दो पहिए हैं। यदि एक पहिया दूसरी दिशा में चलने लग जाता है तो विवाह की बुनियाद लड़खड़ा जाती है, परिवार

समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई है, जो विवाह की धुरी पर टिकी हुई है, धन-वैभव, सुख-समृद्धि दाम्पत्य जीवन के लक्ष्य नहीं हैं, अपितु पारस्परिक प्रेम, सहयोग, समझदारी, सहनशीलता, स्वार्थ का त्याग आदि अनेक चीजे हैं जो दाम्पत्य जीवन की रीढ़ हैं। विवाह प्रतिद्वंदिता साधन नहीं है, पुरुष स्वामी व स्त्री दासी नहीं है, अपितु समाज के महान आदर्शों की रक्षा के लिए एक विनम्र सेवक है। अत: पति-पत्नी को एक-दूसरे का अनुगामी नहीं समझ कर अपना निर्णय दूसरे पर नहीं थोपना चाहिए। विवाद रूपी बंधन का विघटन होना सामाजिक व्यवस्था का लड़खड़ाना है। विवाह की धुरी जितनी मजबूत व सुसंस्कृत होगी, समाज उतना ही मजबूत होगा। आपसी समझबूझ व समझदारी की कमी से विवाह का झिलमिलाता संसार जब टूटता है तो परिवार की सुवासित कल्पना मुरझाने लग जाती है तथा एक छत के नीचे दम्पति का शरीर शव मात्र बनकर रह जाता है।

पारिवारिक न्यायालय की मुख्य विशेषता यह होती है कि यहां परिवार जैसा वातावरण होता है। पारिवारिक विवादों के पक्षकार जज के सामने खड़े न होकर कुर्सी पर बैठते हैं। न्यायाधीश भी न्यायालय की वेशभूषा में न होकर सादे लिबास में होते हैं। पारिवारिक न्यायालयों की कार्यप्रणाली बहुत कम खर्चीली होती है। तलाक, वैवाहिक शून्यता, दाम्पत्य अधिकारों की पुनर्स्थापना आदि विवादों के लिए 20 रुपये के न्याय शुल्क पर पक्षकार न्यायालय से अनुतोष प्राप्त करने के लिए प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत कर सकते हैं। भरण-पोषण के लिए पक्षकार सिर्फ दो रुपये के प्रार्थना-पत्र पर न्यायालय से गुहार कर सकते हैं। पारिवारिक न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत पक्षकारों की पैरवी करने के लिए अधिवक्ताओं पर रोक लगाई गई है ताकि पक्षकार स्वयं पारिवारिक न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के समक्ष अपनी समस्याओं को सहजता से रख सके। किसी जटिल मुकदमे में पारिवारिक न्यायालय का पीठासीन अधिकारी यदि न्यायहित में एवं जनहित में उचित समझे तो वकील को पैरवी करने की अनुमति दे सकता है। पारिवारिक न्यायालय अपनी विशेषताओं के कारण आज परिवार की स्वतंत्रता, गरिमा व अस्मिता के सशक्त प्रहरी बन गए हैं। अन्याय के जंगल के खिलाफ न्यायिक उपचार प्राप्त करने के लिए अपना अंतिम शरणस्थल मान कर पक्षकार न्यायालय के दरवाजे पर दस्तख्त दे सकता है। उसे न्याय के महंगे हाट व समय-भक्षणी तकनीकी प्रक्रिया के भूलभुलैया वाले रास्तों की निरर्थक परिक्रमा नहीं करनी पड़ती। पारिवारिक न्यायालय के गठन से पहले पक्षकार सामाजिक न्याय तो दूर, कानूनसम्मत न्याय की आशा भी खोए बैठा था। न्यायप्राप्ति के चक्रव्यूह में प्रविष्ट होने की कल्पना से ही सिहर उठता था। पारिवारिक न्यायालय के गठन से विलंबकारी न्याय के स्थान पर सस्ता व सारभूत न्याय प्रदान करने की शुरुआत हो गई है। न्याय की देवी जो सदियों से पारिवारिक विवादों के प्रति मोटी पट्टियां बांधकर न्याय मंदिर में राक्षसी कृत्य कर रही थी, पारिवारिक न्यायालय अधिनियम ने उसकी शल्य चिकित्सा करके सस्ते, सरल व त्वरित न्याय की गंगा प्रवाहित की है।

पारिवारिक न्यायालय ने एक जटिल कार्य को आसान बनाकर सचमुच एक अनुकरणीय कार्य किया है तथा देश के सभी राज्यों के लिए वे प्रेरणा स्त्रोत बन गए हैं। लीक से हटकर इन्होंने लोक अदालत का क्षेत्राधिकार भी बढ़ाया है। पारिवारिक न्यायालय का प्रयोग काफी सफल रहा है और पक्षकारों के लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है।

'पारिवारिक न्यायालय' अदालतों की प्रक्रिया से परेशान दु:खी पक्षकारों के लिए मुक्ति व राहत का नया आयाम लेकर सामाजिक न्याय की ओर ले जाने वाली जीवनशरणी के रूप में पल्लवित हुए हैं। पारिवारिक न्यायालय ने अपने अभिनव प्रयोग से यह सिद्ध कर दिया है कि वह आम आदमी के विश्वास को पुन: न्याय व्यवस्था से जोड़ सकते हैं। वर्ष 1984 से पहले कानूनी प्रक्रिया तथा लंबी-चौड़ी बहसों से छन कर न्याय का जो परिणाम निकलता था वह

पक्षकारों के मध्य आज्ञाकारिता तथा श्रद्धा की भावना अंकुरित करने के स्थान पर कटुता को ही जन्म देता था। पारिवारिक न्यायालय ने इस कटुता पर सशक्त प्रहार किया है। पारिवारिक विवाद अत्यंत ही नाजुक प्रकृति के होते हैं। अत: उनकी सुनवाई के लिए कैमरा प्रोसिडिंग की व्यवस्था की गई है। न्यायालय किसी मसले में डाक्टर, विशेषज्ञ या अन्य व्यक्ति की सहायता ले सकते हैं तथा उसे पक्षकारों के हित के लिए गुप्त रख सकते हैं। अधिनियम के अंतर्गत स्वयंसेवी संस्था की सहायता प्राप्त करने की व्यवस्था की गई है ताकि मुकदमे का शीघ्र निस्तारण हो सके। न्यायालय के पीठासीन अधिकारी का सर्वप्रथम तो यही प्रयास रहता है कि मुकदमे का निपटारा आपसी समझ-बूझ से हो। जब मुकदमे का निपटारा आपसी समझाइश से नहीं हो पाता तभी प्रकरण को जल्दी निपटाने के लिए कानूनसम्मत कार्यवाही शुरू की जाती है। जिन मुकदमों में पक्षकार समझौता कर लेते हैं तथा न्यायालय उसके आधार पर डिग्री पारित कर देता है, उसकी कोई अपील नहीं होती। अधिनियम के अंतर्गत पारिवारिक न्यायालय के आदेश एवं निर्णय की अपील उच्च न्यायालय में निर्णय की तिथि से एक माह के भीतर की जा सकती है। परिवार को तोड़ना नहीं अपितु जोड़ना है, पक्षकारों को कानूनी लड़ाई से बचाना है, यही पारिवारिक न्यायालय की भावना है। इसी भावना को दृष्टिगत रखते हुए पारिवारिक न्यायालय परिवार अधिनियम के अंतर्गत कार्य करते हैं। पारिवारिक न्यायालय ने एक जटिल कार्य को आसान बनाकर सचमुच एक अनुकरणीय कार्य किया है तथा देश के सभी राज्यों के लिए वे एक प्रेरणा स्रोत बन गए हैं। लीक से हटकर इन्होंने लोक अदालत का क्षेत्राधिकार भी बढ़ाया है। कोई अच्छा कार्य करने की किसी को धुन सवार हो जाए तो वह एक से बढ़कर एक रचनात्मक निर्णय करना शुरू कर देता है। पारिवारिक न्यायालय का प्रयोग काफी सफल रहा है और पक्षकारों के लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है। जिस भावना से पारिवारिक न्यायालय ने कार्य किया है उससे पक्षकार यही समझने लगे हैं कि कानून की लड़ाई में समय और धन गंवाने के बजाय बीच का रास्ता अपनाएं और आपसी-स्तर पर समस्या का हल तलाश करें। पारिवारिक न्यायालय के प्रथम न्यायाधीश श्री सुन्दरलाल मेहता का कहना है कि पति-पत्नी के विवादों का समाधान करने में परिवार न्यायालय की भूमिका सराहनीय रही है। वे बताते हैं कि उन्हें तलाक देने के निर्णय से बहुत तकलीफ होती थी, उनकी कोशिश हमेशा वैवाहिक जीवन को पुन: एक स्वर्णिम अवसर दिलाने की रहती थी। पक्षकार जब उनके कहने से अपने मामले में समझौता कर लेते थे, तब उन्हें बहुत ही आत्मिक संतोष मिलता था। ऐसे मामलों में दम्पत्ति एक लंबी कानूनी लड़ाई लड़ने से बच गए। इस सुखद स्थिति के लिए वे उन लोगों को श्रेय देते हैं जिन्होंने पारिवारिक न्यायालय अधिनियम पारित करने के लिए समाज में आवाज उठाई तथा कानून निर्माताओं का ध्यान आकर्षित किया जिसके आधार पर देश में यह नया कानून बनाया गया। ❑

(लेखक एक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

कृषि व सेवा क्षेत्र पर कर आवश्यक

कृषि व सेवा क्षेत्रों को कर दायरे में लाए बिना वित्तीय घाटा कम करना मुश्किल है, यह बात एशिया-प्रशांत क्षेत्र के देशों के आर्थिक-सामाजिक सर्वेक्षण (इस्क्रैप) में कही गई है। गौरतलब है कि भारत में कर राजस्व प्राप्ति सकल घरेलू उत्पाद के परिप्रेक्ष्य में मात्र छह फीसदी है जो अन्य देशों की तुलना में बेहद कम है। सर्वेक्षण के मुताबिक कर-राजस्व की उगाही कम होने की वजह से भारत में राजस्व-प्राप्ति व्यय की तुलना में काफी कम है।

प्रस्ताव में कहा गया है कि वित्तीय पूंजी पर कर इस तरह लगाया जाए जिसका पूंजी मालिक और श्रमिक दोनों पर समान रूप से भार पड़े। राज्यों के उपक्रमों का निजीकरण करने और शेयर बाजार एवं वित्तीय बाजारों के निरीक्षण तथा नियमन का सारा व्यय शेयर बाजारों के सदस्यों से लिया जाना भी प्रस्ताव में शामिल है।

विकास एवं पर्यावरण नीति

प्रकाश चन्द्र शुक्ल

आर्थिक विकास एवं पर्यावरण प्रदूषण पर किए गए अधिकांश अध्ययन दर्शाते हैं कि आर्थिक विकास बढ़ने के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण भी बढ़ता है। विकास और पर्यावरण संरक्षण की दीर्घकालिक नीति में सर्वाधिक महत्व पर्यावरण शिक्षा पर दिया जाना चाहिए क्योंकि अगर यह नागरिकों के जीवन मूल्य बन जाएं तो कानून बनाने और लागू करने की दिक्कतें स्वयं हल हो जाएंगी।

अर्थशास्त्र में उत्पादन के पांच साधन स्वीकार किए गए हैं : भूमि, पूंजी, श्रम, साहस और संगठन। इनमें से केवल भूमि प्राकृतिक है, शेष चार मानवीय। अर्थशास्त्र में भूमि मात्र जमीन तक सीमित नहीं है। भूमि की परिभाषा प्रकृति के नि:शुल्क उपहार के रूप में की गई है। अर्थात जो कुछ भी प्राकृतिक रूप में है, भूमि है। भूमि उत्पादन का निष्क्रिय साधन है और मानव सक्रिय। इसलिए मनुष्य ने मनमाने ढंग से भूमि, प्रकृति या पर्यावरण का प्रयोग किया है तथा मानव द्वारा किए गए आर्थिक विकास प्रयासों का असर पर्यावरणीय संपदा पर पड़ा है। और अब जब विश्व में पर्यावरणीय समस्याएं बढ़ रही हैं, पर्यावरण संरक्षण के लिए गंभीरता से अध्ययन किए जा रहे हैं; विकास तथा पर्यावरण के बिगड़ते संबंध को सुधारने के प्रयास किए जा रहे हैं। वर्ष 1992 में विश्व बैंक द्वारा 'विकास और पर्यावरण' अंक प्रकाशित किए जाने के बाद से आर्थिक साहित्य में विकास और पर्यावरण के संबंधों पर अनेक लेख छापे गए हैं जिनमें इस बिगड़ते संबंध को नापने और नीति सुझाने का प्रयास किया गया है।

विकास-पर्यावरण संबंध

अर्थशास्त्री कुजनेट्स ने विभिन्न देशों के पर्यावरणीय प्रदूषण के आंकड़ों को प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय से जोड़ते हुए वक्रों की सहायता से यह निष्कर्ष निकाला है कि विकास के आरंभिक दौर में पर्यावरण प्रदूषण होना अपरिहार्य है और एक निश्चित आय-स्तर प्राप्त कर लेने के पश्चात ही पर्यावरण का संरक्षण और सुधार संभव है। अनेक अन्य अध्ययनों (शफीक व बन्दोपाध्याय, 1992) ने भी दर्शाया है कि देश में आय-स्तर बढ़ने के साथ-साथ पेयजल और रहन-सहन की स्वच्छता निरंतर बढ़ती जाती है पर सल्फर-डाइ-आक्साइड की मात्रा वातावरण में आरंभ में बढ़ती है जो एक निश्चित आय-स्तर प्राप्त करने के बाद ही कम हो पाती है। उन्होंने यह भी दर्शाया है कि वातावरण में कार्बन-डाइ-आक्साइड की मात्रा आय-स्तर बढ़ने के साथ-साथ बढ़ती जाती है। बीड और ब्लूम (1995) ने विश्व के अमीर और गरीब देशों के शहरों में उत्पन्न अपशिष्ट का अध्ययन करने पर यह पाया है कि नगरीय अपशिष्ट की मात्रा का सीधा धनात्मक संबंध प्रति व्यक्ति आय से है। विकासशील देशों की तुलना में विकसित देशों में प्रति व्यक्ति नगरीय अपशिष्ट की मात्रा बहुत अधिक है। इस प्रकार आर्थिक विकास और पर्यावरण प्रदूषण पर किए गए अध्ययन यह दर्शाते हैं कि आर्थिक विकास बढ़ने के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण भी बढ़ता है। निष्कर्ष रूप में, विकास और पर्यावरण के बीच एक खींचतान है, यदि विकास है तो पर्यावरण प्रदूषण भी है और यदि पर्यावरण संरक्षण को

अधिक महत्व दिया जाता है तो विकास प्रभावित होता है। वर्ष 1962 में जब रेचल कार्सन की पुस्तक 'साइलेंट स्प्रिंग' प्रकाशित हुई तो लोगों का ध्यान पर्यावरण के नष्ट होते सौंदर्य पर तो गया परंतु उसके आर्थिक प्रभावों पर नहीं। वर्ष 1994 में बॅज़ हॉलिंग ने यह पाया कि चिड़ियों के न आने से स्थानीय कीड़ों-मकोड़ों की संख्या में इतनी वृद्धि हुई है कि बोरियल जंगल को नुकसान हो रहा है और उसने अनुमान लगाया कि यदि चिड़ियों की संख्या घटकर एक तिहाई रह जाएगी तो कनाडा के जंगलों में भारी परिवर्तन आएगा और टिम्बर का उत्पादन कम हो जाएगा। औद्योगिक विकास से हो रही वातावरण की क्षति और मानव जीवन की समृद्धता पर उसके प्रभाव पर वैज्ञानिक निरंतर नए-नए निष्कर्ष निकाल रहे हैं। सामान्यतया अभी लोग विकास के दूरगामी दुष्परिणामों के प्रति उतने सजग नहीं हैं। कारण यह है कि कम आय वाले देशों में पर्यावरणीय समस्याएं अभी गंभीर नहीं हुई हैं। आर्थिक विकास पर्यावरण संरक्षण से अधिक गंभीर समस्या है। इन देशों में सबके लिए रोटी, कपड़ा, मकान आदि उपलब्ध करा पाना भी अभी समस्या बना हुआ है। गरीब के लिए पर्यावरणीय संपदा उपभोग की एक आवश्यक वस्तु के रूप में है जिसका दोहन कर वे अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। उनके लिए पर्यावरणीय संपदा की मांग की आय लोच एक से कम है। अमीर वर्ग, जो अपनी मूल आवश्यकता पूरी कर चुके हैं, रोस्टोव के वर्गीकरण के अनुसार उच्च सामूहिक उपभोग (हाई मास कन्संप्शन) की दशा में हैं, पर्यावरणीय संपदा (पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, नैसर्गिक वातावरण, प्राकृतिक सौंदर्य स्थल आदि) विलासिता की वस्तुएं हैं जिनके लिए उनकी मांग की आय लोच एक से ज्यादा है। इसलिए पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता देने के प्रति दोनों वर्गों के दृष्टिकोण में अंतर है। इस अंतर का एक कारण यह भी है कि गरीब वर्ग में वर्तमान की चिंताओं के आगे भविष्य की चिंताओं का महत्व कम होता है। (कुन्धान्दे, 1995) और पर्यावरणीय समस्याएं वर्तमान से नहीं भविष्य से जुड़ी दिखती हैं। अत: अमीर पर्यावरण संरक्षण को विकास के ऊपर प्राथमिकता देते हैं और गरीब विकास प्रयासों को अधिक जरूरी मानते हैं।

नए प्रयोग

विभिन्न अध्ययनों में जो विकास-पर्यावरण संबंध दर्शाए गए हैं, उन पर बहुत से पर्यावरणविदों ने प्रश्न उठाए हैं। उनका कहना है कि इनमें कमी यह है कि वे समय श्रेणी पर आधारित नहीं हैं। बदलती हुई पर्यावरण-मित्र तकनीकी का प्रभाव इन पर दिखाई नहीं पड़ा है। बहुत से व्याख्याकारों का मानना है कि नई परिवेश-मित्र तकनीकी और पर्यावरण संबंधी सरकारी नीतियों के कारण स्थिति उतनी खराब नहीं है जितनी इन अध्ययनों के निष्कर्षों से लगती है। इधर विश्व के सभी सभ्य समाजों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता आई है। बाल श्रम द्वारा निर्मित वस्तुओं, पशु खाल के सामानों, हाथी दांत के सामानों, पालीथीन के प्रयोग आदि के विरुद्ध आंदोलन शुरू हुए हैं। लोग पर्यावरण

आय और प्रदूषण

देश	प्रति व्यक्ति जीएनपी (1996)	वनों की कटाई (वार्षिक, वर्ग कि.मी. 1990-1995)	कार्बनिक जलीय प्रदूषणों का उत्सर्जन (टन प्रतिदिन 1980)	कार्बन-डाई-आक्साइड का उत्सर्जन (प्रति व्यक्ति टन वार्षिक)	कार की संख्या (प्रति हजार व्यक्ति 1996)
कम आय	490	38,690	5,286	1.4	4
मध्यम आय	2590	74,598	4,462	4.5	65
उच्च आय	25,870	-11,564	8,997	12.5	427

स्रोत : वर्ल्ड डेवलपमेंट इंडीकेटर 1998 से संकलित।

की कीमत समझने लगे हैं। अध्ययनों से यह भी पता चला है कि शेयर बाजार में प्रदूषण के लिए बदनाम उद्योगों को धक्का पहुंच रहा है। देशों की औद्योगिक नीति और विकास नीति में पर्यावरण संरक्षण के पक्ष में परिवर्तन किए जा रहे हैं।

पर्यावरण संरक्षण की दिशा में विभिन्न विकसित और विकासशील देशों में अनेक नीतिगत परिवर्तन हुए हैं जिनके अच्छे परिणाम देखने को मिले हैं। कुछ देशों ने वित्तीय प्रेरणा की नीति अपनाई है, कुछ देशों ने कारखानों के प्रदूषण के आधार पर रंग कूट (कलर कोड) दिया है। कुछ देशों में प्रदूषकों के विरुद्ध प्रचार की नीति अपनाई गई है और कुछ ने प्रदूषित उत्सर्जन के आधार पर दंडात्मक वसूली की नीति का पालन शुरू किया है। अनेक देशों ने औद्योगिक मजदूरों और जनता को प्रदूषण के विरूद्ध जागरुक बनाना शुरू किया है क्योंकि प्रदूषण का सबसे बुरा असर इन्हीं पर पड़ता है। इन प्रयासों के अच्छे परिणाम सामने आए हैं। उदाहरण के लिए चीन में, जहां 1980 और 1990 के दशक में आर्थिक खुलापन आया और आर्थिक विकास तेजी से बढ़ा, वहां वायु की गुणवत्ता में आरंभ में तेजी से कमी आई पर बाद में प्रदूषण नियंत्रण के प्रयासों से यह गिरावट रुक गई और कुछ सुधार भी हुआ। कीन्या के मचाकोस जिले में पर्यावरण जागरूकता का अच्छा परिणाम देखने में आया। यहां 1930 की अपेक्षा 1990 में जनसंख्या पांच गुना अधिक हो गई। विकास दर्शाने वाली प्रति व्यक्ति आय भी पहले से बढ़ी पर नियंत्रित विकास के कार्यक्रम के कारण भूमि कटाव कम हो गया है और वृक्षों की संख्या भी 1930 की अपेक्षा अधिक हो गई।

कोलम्बिया में प्रदूषण नियंत्रण के अनेक नियम असफल हो जाने के बाद सरकार द्वारा प्रदूषण की मात्रा के आधार पर वसूली करने की नीति अपनाई गई जिसका अच्छा असर देखने को मिला। वहां मात्र एक वर्ष में कार्बनिक विसर्जन (आरगेनिक डिस्चार्ज) में 18 प्रतिशत की कमी आई।

इस वसूली नीति की सफलता का कारण यह रहा कि प्रबंधक सजग हो गए कि कहीं लागत बढ़ने के कारण वे बाजार से बाहर न हो जाएं। इसी तरह कोलम्बिया में नदियों की सफाई के लिए 1997 में पानी को प्रदूषित करने वाली फैक्ट्रियों पर वसूली लगाई गई। पहले इसे देश के तीन भागों में लागू किया गया, फिर सात भागों में और फिर पूरे देश में। इस व्यवस्था के अंतर्गत प्रत्येक कारखाने को प्रति टन कार्बनिक अपशिष्ट (आरगेनिक वेस्ट) के लिए 28 डालर और प्रतिदिन आधुलित अपशिष्ट (सस्पेंडेड वेस्ट) के लिए 12 डालर देने पड़ते हैं। इस नीति में यह व्यवस्था भी है कि यदि अगले छह महीनों में अपशिष्ट में कमी आए तो वसूली दर और बढ़ा दी जाती है। इस नीति का अच्छा परिणाम देखने को मिला है। कारखानों द्वारा कार्बनिक विसर्जन (आरगेनिक डिस्चार्ज) में पचास प्रतिशत से अधिक की कमी आई है।

इंडोनेशिया के प्रदूषण नियंत्रण विभाग 'प्रापर' ने एक नायाब तरीका अपनाया है। उसने कारखानों को प्रदूषण के आधार पर रंग कूट (कलर कोड) देने की नीति अपनाई। प्रदूषण नियंत्रण का शानदार प्रयास करने वाले कारखाने को सुनहरा रंग कूट दिया जाता है और न्यूनतम जागरुक कारखाने को काला। इसी तरह राष्ट्रीय मानक के बराबर प्रयास करने वाले को लाल तथा राष्ट्रीय मानक से अच्छा प्रयास करने वाले को हरा रंग कूट दिया जाता है। राष्ट्रीय मानक से कम प्रयास करने वाले को नीले रंग से नवाजा जाता है। 'प्रॉपर' ने इस योजना का आरंभ भी अच्छी तरह किया। उसने व्यक्तिगत रूप से सभी कारखानों को उनके रंग कूट बताकर यह कहा कि अगले छह महीने बाद पुनर्मूल्यांकन कर रंग कूट सार्वजनिक कर दिए जाएंगे। इस नीति का अच्छा असर पड़ा। अनेक कारखानों ने अपनी बाजार

प्रदूषण के बारे में काम करने वाले संगठनों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। उन्हें ज्यादा से ज्यादा सूचनाएं और अधिकार मिलने चाहिए। यहां पारदर्शिता अत्यंत महत्वपूर्ण है। पर्यावरण संबंधी जानकारी निरंतर मीडिया के माध्यम से प्रचारित की जानी चाहिए। कानून तभी सफल होते हैं जब उन्हें जन सहयोग मिलता है।

प्रतिष्ठा के अनुरूप सुधार कर लिए। रंग कूटों को सार्वजनिक कर दिए जाने के बाद और अधिक सुधार हुए।

उत्तरी अमेरिका और लेटिन अमेरिका में अनेक सामुदायिक संगठनों और गैर-सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) द्वारा उपभोक्ताओं को जागरुक कर प्रदूषण फैलाने वाले कारखानों के उत्पाद के बहिष्कार के लिए तैयार किया जा रहा है। ये संगठन कारखानों द्वारा किए जा रहे प्रदूषण के संदर्भ में सूचनाएं जमा करते हैं, कारखानों से प्रदूषण कम करने की अपील करते हैं, उनके खिलाफ प्रदर्शन करते हैं और सत्य जनता के सामने रखते हैं। पर्यावरण के प्रति जागरुक उपभोक्ता और क्षेत्रीय नागरिक भी दबाव बनाने का कार्य करते हैं।

सुझाव

सभी विकसित और विकासशील देशों में पर्यावरण के प्रति जागरुकता हाल के वर्षों में बढ़ी है। भारत में तो सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली के हजारों कारखानों को रिहायशी क्षेत्र से हटाने के आदेश दे दिए हैं। कारखानों के मालिक और कर्मचारी विरोध कर रहे हैं। सरकार बीच का रास्ता खोज रही है। मुख्य कारण विकास और पर्यावरण की खींचतान है। अत: विकास और पर्यावरण की दीर्घकालिक समन्वित नीति ही इस खींचतान का हल निकाल सकती है। कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं :

पर्यावरण और विकास के संबंध में नीति बनाने में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि पर्यावरणीय समस्याएं मूलत: स्थानीय हैं। उनका कारण और निवारण स्थानीय है जो सीधे स्थानीय जनता और प्रशासन से जुड़ा है। अत: नियम कानून स्थानीय स्तर पर तय किए जाने चाहिए। स्थानीय स्तर पर भी नियंत्रण बनाए रखने के लिए प्रादेशिक और राष्ट्रीय मानक अवश्य तय कर दिए जाने चाहिए। चीन जैसी अर्थव्यवस्था में भी शहरों की परिस्थिति के हिसाब से स्थानीय नियम लागू किए गए हैं।

प्रदूषण नियंत्रण हेतु चरणबद्ध दीर्घकालिक कार्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए। पहले सर्वाधिक प्रदूषित क्षेत्रों और कारखानों पर कार्यवाही की जानी चाहिए पर, न्यूनतम प्रदूषण वाले क्षेत्रों और कारखानों पर भी कुछ न कुछ नियम अवश्य लागू होने चाहिए जिससे वे भी पर्यावरण के प्रति जागरुक रहें। ब्राजील के रियो-डि-जिनेरो शहरों के 50 बड़े कारखानों पर प्रदूषण नियंत्रण करते ही शहर का 60 प्रतिशत प्रदूषण नियंत्रित हो गया।

प्रदूषण के बारे में काम करने वाले संगठनों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। उन्हें ज्यादा से ज्यादा सूचनाएं और अधिकार मिलने चाहिए। यहां पारदर्शिता अत्यंत महत्वपूर्ण है। पर्यावरण संबंधी जानकारी निरंतर ही मीडिया के माध्यम से प्रचारित की जानी चाहिए। पर्यावरण शिक्षा ही जनता के सहयोग को आकर्षित करती है। कानून तभी सफल होते हैं जब उन्हें जनसहयोग मिलता है।

प्रत्येक औद्योगिक क्षेत्र में प्रदूषण-स्तर का निरंतर माप होना चाहिए और कारखानों से प्रदूषण के आधार पर वसूली की जानी चाहिए। सरकारी सहायता, बैंक ऋण आदि सुविधा देते समय भी तकनीकी विशेषज्ञों की सहायता प्रदूषण के संदर्भ में ली जानी चाहिए तथा न्यूनतम प्रदूषक तकनीकी को स्वीकृति और सहायता दी जानी चाहिए।

न्यूनतम पर्यावरण क्षति के साथ अधिकतम विकास के लक्ष्य की नीति का निर्माण किया जाना चाहिए। सिद्धांतत: आर्थिक विकास का सीमांत लाभ किसी भी दशा में पर्यावरण की सीमांत हानि से कम नहीं होना चाहिए। इसलिए हर आर्थिक विकास कार्यक्रम की पर्यावरणीय लागत के आंकलन का विश्वसनीय तरीका विकसित किया जाना चाहिए। नीति में सर्वाधिक महत्व पर्यावरणीय शिक्षा को दिया जाना चाहिए। पर्यावरण संरक्षण जैसे मूल्य की स्थापना का भरपूर प्रयास होना चाहिए। यदि नागरिकों में पर्यावरण संरक्षण एक मूल्य बन जाता है तो कानून बनाने और लागू करने की दिक्कतें स्वयं दूर हो जाती हैं।

पर्यावरण को भी उत्पादन का एक साधन माना जाना चाहिए और कोशिश यह की जानी चाहिए कि उत्पादन की पर्यावरणीय लागत कम से कम की जाए। ❑

(उपाचार्य, अर्थशास्त्र विभाग, दी.द.उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर।)

इक्कीसवीं सदी में उच्च शिक्षा की चुनौतियां

अधिकेश राय

उच्च शिक्षा से समुदाय एवं राष्ट्र शक्तिसंपन्न तथा लोकतंत्र मजबूत होता है जिससे मानवता पर आधारित विकास गतिमान होता है। लेखक के विचार में भारत में उच्च शिक्षा के समक्ष समस्या साधन अथवा संख्या की नहीं अपितु वातावरण एवं व्यवस्था की है। आज हमें जरूरत है उच्च शिक्षा के ऐसे स्वरूप की जो राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय-स्तर पर समाज के अंग के रूप में कार्य कर देश का सही विकास सुनिश्चित कर सके।

शिक्षा ज्ञान का वह अमूल्य अस्त्र है जो अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है; जिससे सभ्यताएं बनती हैं, संस्कृतियां परवान चढ़ती हैं एवं इतिहास लिखे जाते हैं। शिक्षा जीवन दर्शन है एवं सामाजिक विकास का सबसे प्रभावशाली माध्यम है। इसीलिए शिक्षा को विकास के एक महत्वपूर्ण मापदण्ड के रूप में पहचाना गया है। उच्च शिक्षा से समुदाय व राष्ट्र शक्तिसंपन्न और लोकतंत्र मजबूत होता है जिससे मानवता पर आधारित विकास गतिमान होता है तथा इससे शक्ति, सद्भाव और सामाजिक न्याय को बल मिलता है।

भारत में आधुनिक उच्च शिक्षा अंग्रेजों की देन है इसके जन्मदाता चार्ल्स ग्रांट थे। अंग्रेजों ने शिक्षा को अपने हित के लिए इस्तेमाल किया। उनका उद्देश्य भारत में एक ऐसा शिक्षित वर्ग पैदा करना था जो औपनिवेशिक शासन को सुचारू रूप से चलाने में सहायक हो। सन 1916 में देश में 5 विश्वविद्यालय थे। भारत में अंग्रेजी शिक्षा का लक्ष्य ईसाई धर्म और अंग्रेजी राज्य की नींव मजबूत करना था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने शिक्षा की प्रगति की ओर ध्यान दिया व 4 नवंबर 1948 को भारतीय विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की नियुक्ति की गई। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों में नेतृत्व, संस्कृति एवं व्यक्तित्व का विकास करना था। सन 1951 में हमारे देश में 498 महाविद्यालय व 27 विश्वविद्यालय थे जिनकी संख्या बढ़कर सन 2000 में 10,555 महाविद्यालय व 221 विश्वविद्यालय हो गई। यदि वर्ष 1951 को आधार मानकर विकास दर निकाली जाए तो महाविद्यालयों में 2119 गुना व विश्वविद्यालयों में 819 गुना वृद्धि हुई है। आज हमारे देश में 65 प्रतिशत लोग साक्षर हैं। सन 2005 तक हम साक्षरता के न्यूनतम स्तर को पा लेंगे, ऐसा अनुमान लगाया गया है।

सन 1854 में चार्ल्स वुड ने अंग्रेजी राज्य में शिक्षा का उद्देश्य राज्य सेवा हेतु ईमानदार सेवक तैयार करना बताया। सन 1883 में विलियम हण्टर ने शिक्षा को जिला बोर्ड और म्युनिस्पलिटी के अधीन करने की सिफारिश की। सन 1917 में सैडलर द्वारा उच्च शिक्षा के दोषों की जांच के लिए कमीशन बनाया गया। सन 1944 में सार्जेंट कमीशन ने स्नातक डिग्री कोर्स तीन वर्षों में पूरा करने की सिफारिश की। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात 1948 में सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में बनाई गई कमेटी ने अवकाश, वेतन, अध्ययन-स्तर व विषयों के संदर्भ में अपने विचार दिए। सन 1966 में उच्च शिक्षा सुधार हेतु कोठारी आयोग बनाया गया जिसने उच्च शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित किए एवं महत्वपूर्ण परिवर्तन करने के सुझाव दिए। सन 1986 में राष्ट्रीय

शिक्षा नीति तथा 1992 में शिक्षा सुधार हेतु नई शिक्षा नीति बनाई गई जिसने अपने-अपने सुझाव दिए।

शिक्षा सुधार हेतु गठित आयोगों की दर्जनों बड़ी-बड़ी रिपोर्टों और सिफारिशों के बावजूद भारत में शिक्षा व्यवस्था की रूपरेखा वही है जो अंग्रेजों ने पढ़े-लिखे क्लर्क और शासकीय सेवक प्राप्त करने के लिए यहां प्रारंभ की थी। यद्यपि इन रिपोर्टों में बार-बार यह जोर दिया जाता रहा कि हमारी शिक्षा देश की आवश्यकताओं के अनुरूप व्यावहारिक होनी चाहिए परंतु न तो शिक्षा पद्धति का भारतीयकरण ही हुआ और न ही शिक्षा दैनिक जीवन में उपयोगी हो पाई। उच्च शिक्षा देश के नागरिकों में प्रजातंत्रीय भावनाओं के विकास में सर्वथा असफल रही। आज शिक्षा के क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। थोड़े-बहुत संशोधनों से उसके दोष दूर नहीं होंगे। वर्तमान शिक्षा की नींव ऐसी होनी चाहिए कि भारतीय जनजीवन और संस्कृति पर आधारित हो, जिसमें पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान का भी स्थान हो, जो सच्चे प्रजातंत्रीय जीवन के लिए भारतीयों को तैयार करे और उन्हें विश्व नागरिक बनाए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात उच्च शिक्षा विकास

वर्ष	महाविद्यालय	महाविद्यालय की विकास दर	विश्वविद्यालय	विश्वविद्यालय की विकास दर
1951	498	100	27	100
1961	1039	209	45	167
1971	2647	532	100	370
1981	3635	730	137	507
1991[1]	5058	1016	184	681
2000[2]	10555	2119	221	819

स्रोत : 1. योजना—अप्रैल 98, पृ. 27; 2. इंडिया—2000

नोट : अ-विकास दर वर्ष 1951 को आधार वर्ष मानकर निकाली गई है।
ब-विकास दर में आधार वर्ष = 100 माना गया है।
स-विकास दर निकालने के लिए = $\frac{\text{वर्तमान वर्ष} \times 100}{\text{आधार वर्ष}}$ सूत्र का प्रयोग किया गया है।

उद्देश्य : उच्च शिक्षा का उद्देश्य उत्पादन वृद्धि, सामाजिक व राष्ट्रीय एकता, चरित्र निर्माण, नेतृत्व क्षमता व आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को तेज करना है ताकि व्यक्ति व समाज का विकास हो सके। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने शिक्षा के निम्न उद्देश्य बताए हैं :—

- आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तन में नेतृत्व ग्रहण कर सकने वाले व्यक्तित्व का निर्माण;
- दूरदर्शी, बुद्धिमान व बौद्धिक व्यक्ति का निर्माण जो समाज सुधार के कार्य में योगदान दे सके;
- प्रजातंत्र सफल बनाने के लिए शिक्षा का प्रसार व ज्ञान की खोज कर सकने वाले व्यक्ति उत्पन्न करना;
- राष्ट्रीय व सांस्कृतिक विरासत को अपनाने वाले नागरिक बनाना;
- देश की सभ्यता-संस्कृति के लिए रक्षक व पोषक अग्रदूतों का निर्माण;
- अनुसंधान व खोज विकसित करना तथा स्वस्थ शरीर व स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण।

हमने उच्च शिक्षा के जो उद्देश्य निर्धारित किए थे, उन उद्देश्यों या लक्ष्यों को हम प्राप्त नहीं कर सके। अब हमें उच्च शिक्षा के लक्ष्य फिर से निर्धारित करने होंगे। पहले जिन लक्ष्यों को हम प्राप्त नहीं कर पाए, उनके प्राप्त न होने के कारणों को खोजना पड़ेगा। यह उच्च शिक्षा के लिए सबसे बड़ी चुनौती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में, जिसे 1992 में संशोधित किया गया, उच्च शिक्षा के संबंध में निम्न प्रावधान किए गए हैं:

- उच्च शिक्षा से जुड़ी ऐसी गतिविधियां बढ़ाना जिससे समाज तथा स्वयंसेवी संस्थाओं की सहभागिता बढ़ाई जा सके;
- शिक्षकों की क्षमता व कार्यकुशलता बढ़ाने हेतु प्रशिक्षण की व्यवस्था; एवं
- उन्नत शिक्षण विधियों व उपकरणों के इस्तेमाल को बढ़ावा देना;

शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है। नई नीति ने निम्न कमियों की ओर संकेत किया है:

- शिक्षकों की व्यावसायिक प्रतिबद्धता तथा व्यापक दक्षताओं के संबंध में स्थिति असंतोषजनक है।
- उच्च शिक्षा में सुधार के बावजूद सुधार नहीं आया है, अपितु गिरावट के संकेत दिखाई दिए हैं।
- उच्च शिक्षा कार्यक्रमों में जो प्रशिक्षण अध्यापकों को दिया जाता है, न तो इसका कोई सेवाकालीन प्रशिक्षण व्यावसायिक कार्यक्रम है, न ही पर्याप्त सुविधाएं।

भारत में उच्च शिक्षा का विकास आदि से अंत तक अनियोजित रहा है। परिणामस्वरूप जहां एक ओर शिक्षा स्तर में गिरावट आई है वहीं छात्रों में ज्ञानार्जन की अभिलाषा नष्ट हुई है। शिक्षित व्यक्तियों के समक्ष बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो गई है तथा डिग्रियां सिर्फ कागजी घोड़ा बनकर रह गई हैं। हमारी उच्च शिक्षा रोजगारोन्मुखी नहीं है। इसका स्वरूप शिक्षक-केंद्रित व परीक्षोन्मुख है जो सिर्फ डिग्री बांटता है। शिक्षा में गुणवत्ता का अभाव है। आज ऐसी शिक्षा की जरूरत है कि हम रामायण भी पढ़ें और अणु बम को भी जानें।

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में एक ध्रुवीय विश्व संरचना से पूंजीवादी प्रभाव विश्व में एकछत्र रूप से छाने लगा और एक लोक कल्याणकारी राज्य में शिक्षा, जिसे राज्य के प्रमुख दायित्वों में से एक माना गया था, बाजार शक्तियों पर आश्रित होने लगी। आज हमने अपनी अर्थव्यवस्था का भूमंडलीकरण कर दिया है। इससे शिक्षा का क्षेत्र भी अछूता नहीं रहना चाहिए। आज जरूरत है कि पूरे विश्व का शिक्षा तंत्र, शिक्षा व्यवस्था, पाठ्यक्रम, डिग्रियां एक-सी हों। कंप्यूटरीकरण के इस दौर में यह संभव भी है। उच्च शिक्षा में इसे लागू करना सबसे बड़ी चुनौती है।

ईसा के जन्म के पश्चात दो सहस्त्राब्दियां गुजर गई हैं। परिवर्तन की जो गति पिछली सहस्त्राब्दी के अंतिम दो दशकों में दिखाई दी उसके अनुरूप नई सदी के बारे में सोचा जाए तो कल्पना करना कठिन होगा कि सौ वर्ष बाद शिक्षा का स्वरूप क्या होगा। फिर भी विज्ञान के विकास से उत्पन्न सूचना एवं संचार क्रांति द्वारा शिक्षा का विकास इस गति से होगा कि शिक्षा हर आदमी तक पहुंच जाएगी। तब उच्च शिक्षा को रोजगारोन्मुख बनाना तथा उसमें राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण शिक्षा, यौन शिक्षा, महिला-पुरुष समानता, धर्मनिरपेक्षता, आदि को व्यावहारिक रूप देना एक चुनौती होगा।

उच्च शिक्षा में अब तक प्रचलित 'पाठ्यक्रम केंद्रित' अध्ययन पद्धति को बदलकर उसे 'शिक्षार्थी केंद्रित' बनाने का विचार सर्वत्र स्वीकार कर लिया गया है। आज की सबसे बड़ी मांग है शिक्षा तंत्र का विकेन्द्रीकरण। अब शिक्षार्थी को शिक्षा तंत्र के पास नहीं बल्कि शिक्षा तंत्र को शिक्षार्थी के पास ले जाना होगा। 21वीं सदी में विश्वविद्यालयों को बेहतर तकनीकी प्रौद्योगिकी एवं संसाधन से पूर्ण रखना आवश्यक है क्योंकि उच्च शिक्षा को सरल बनाने के लिए प्रोजेक्टर, स्लाइड प्रोजेक्टर, मल्टीमीडिया सिस्टम, लेसर तकनीक आदि का प्रयोग किया जाएगा। इन संसाधनों को जुटाना व इनके लिए विशेषज्ञ रखना एक चुनौती से कम न होगा। आदमी की जिंदगी में जिस गति से कंप्यूटर शामिल होता जा रहा है उससे 21वीं सदी का छात्र घर बैठे ई-मेल के माध्यम से अपनी रूचि के पाठ्यक्रमों की जानकारी प्राप्त कर लेंगे जिससे शिक्षा के प्रति छात्रों की अभिरुचि बढ़ेगी एवं गुणात्मक विकास होगा। अध्यापक को भी अपनी अध्यापन शैली में गुणात्मक सुधार करना होगा तथा छात्र को हर विषय का प्रायोगिक ज्ञान एवं नए-नए शोधों की जानकारी देनी होगी। शिक्षा की परिभाषा अब 'लर्निंग टु लर्न' अर्थात 'सीखने की शिक्षा' के रूप में की जाएगी। यह सतत शिक्षा का पर्याय है। 21वीं सदी के उच्च शिक्षा कार्यक्रमों में इसे आधार बनाना होगा।

उद्देश्य निर्धारण

सबसे पहले उच्च शिक्षा को निश्चित उद्देश्य से जोड़ना होगा। जब भी कोई विद्यार्थी डिग्री ले तो यह निश्चित हो कि यह डिग्री अमुक उद्देश्य को पूरा करती है। आज उच्च शिक्षा व्यक्ति को जीवन के लिए तैयार नहीं करती। उच्च शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में उत्तरदायित्व का निर्धारण व नेतृत्व की गुण क्षमता का विकास करना है। आज हमारे स्नातकोत्तर छात्र नौकरी के लिए दर-दर भटकते हैं। उनमें उत्तरदायित्व निर्धारण तथा नेतृत्व गुण नहीं आ पाते। इन उद्देश्यों का पुन:र्निर्धारण 21वीं सदी के समक्ष प्रथम चुनौती है।

दोषपूर्ण पाठ्यक्रम

उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम का परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार पुनर्गठन आवश्यक है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में अनुसंधान विधियों के उपयोग पर आधारित पाठ्यक्रम होने चाहिए। भविष्य में इस संरचना तथा रूपरेखा के इस पहलू पर ध्यान देना आवश्यक है। अनुसंधान के विभिन्न पहलुओं में अनुसंधान नीतियों, समस्याओं व पाठ्यक्रम मूल्यांकन पद्धतियों, प्रशिक्षण नीतियों एवं कलापक्ष प्रथाओं का प्रत्युत्तर रूप से उपयोग होना चाहिए। आज वही पुराने विषय— इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र पढ़ाए जाते हैं। उच्च

शिक्षा का विस्तार तो हुआ है किंतु पाठ्यक्रमों में कठोरता, व्यावसायिक विषयों का अभाव, रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रम न होना आदि कारणों से छात्रों का मानसिक विकास रुक जाता है।

शिक्षा का माध्यम

उच्च शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रहे या क्षेत्रीय भाषा या अंग्रेजी, यह एक जटिल चुनौती है। एक छात्र जितना समय अंग्रेजी सीखने में लगाता है यदि उतना समय ज्ञानार्जन में लगाए तो छात्र की योग्यता में विशेष वृद्धि होगी। जो भाव मातृभाषा में व्यक्त हो सकते हैं, वे विदेशी भाषा में व्यक्त नहीं हो सकते। उच्च शिक्षा में दीर्घकाल से अंग्रेजी माध्यम है किंतु संविधान में हिंदी एवं अन्य 14 भाषाओं को मान्यता प्रदान की गई है। अत: देश के नीतिनिर्धारकों के समक्ष यह ज्वलंत प्रश्न है कि उच्च शिक्षा का माध्यम हिंदी हो, या अंग्रेजी, या अन्य भाषा। शिक्षा के माध्यम को लेकर शिक्षाविदों में जो विवाद बन गया है, वह 21वीं सदी में उच्च शिक्षा के समक्ष एक चुनौती है।

शिक्षा-स्तर में गिरावट

पुरातन शिक्षा पद्धति वर्तमान शिक्षा से अच्छी थी। आज के विद्यार्थी को न हिंदी आती है, न अंग्रेजी। उच्च शिक्षा का स्तर पहले से बहुत गिर गया है। वर्तमान में विश्वविद्यालय व महाविद्यालयों में शिक्षा का स्तर निम्न कोटि का होता जा रहा है। इसका मुख्य कारण अनुसंधान की कमी है। अत: उच्च शिक्षा द्वारा 21वीं सदी में सुयोग्य नेता, स्वतंत्र चिंतक व अच्छे राष्ट्र सेवक का निर्माण एक चुनौती होगा।

छात्र अनुशासनहीनता

छात्र अनुशासनहीनता की जननी हमारी उच्च शिक्षा है। धन की अनियमितता, दुर्व्यवहार, उच्छृंखल व्यवहार, यौन दुर्व्यवहार, चोरी, सेंधमारी, स्वाधिकारों का दुरुपयोग, परीक्षा में धूर्तता—इन कारणों से हमारी उच्च शिक्षा राष्ट्रीय एकता व राष्ट्र निर्माण में योगदान नहीं दे पाती। यह अभिभावकों का दायित्व है कि वे छात्रों को सुसंस्कार दें। यह समस्या दिन-प्रति-दिन गंभीर होती जा रही है। छात्रों में अनुशासनहीनता को दूर करना 21वीं सदी में उच्च शिक्षा की चुनौती होगी।

आर्थिक चुनौतियां

उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमंडलीकरण को स्वीकार करने के बाद भारत की आर्थिक नीतियां अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा

उच्च शिक्षा के अंतर्गत योजनाकाल में खर्च*

क्षेत्र	पहली योजना 1951-56	दूसरी योजना 1956-61	तीसरी योजना 1961-66	योजना अवकाश 1966-69	चौथी योजना 1969-74	पांचवीं योजना 1974-79	छठी योजना 1980-85	सातवीं योजना 1985-90	1990-92	आठवीं योजना 1992-97	नौवीं योजना 1997-2002
शिक्षा क्षेत्र पर कुल खर्च	1530	2730	5890	3230	7860	9120	25300	76330	47270	196000	2038162•
उच्च शिक्षा पर खर्च	140	480	870	770	1950	2050	5590	12010	5880	15160	25000
कुल शिक्षा खर्च में उच्च शिक्षा खर्च का प्रतिशत	9	18	15	24	25	22	22	16	12	8	12
शिक्षा खर्च की विकास दर	100	343	621	550	1393	1464	3993	8579	4200	10829	17857

नोट : * शिक्षा खर्च (व्यय) 1,00,000 रुपयों में है।

• विकास दर निकालने के लिए 1951-56 को आधार वर्ष माना गया है; आधार वर्ष = 100 माना गया है; विकास दर की गणना 'वर्तमान वर्ष × 100/ आधार वर्ष' इस सूत्र के आधार पर की गई है।

स्रोत : 1. इंडिया—2000, शिक्षा, पेज 95, प्रकाशन विभाग, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

2. डा. आर.बी.बी. वैद्यनाथ अय्यर, भारत में शैक्षिक नियोजन और प्रशासन : अतीत तथा भविष्य, जर्नल आफ एजुकेशन प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन, खंड-7, अंक 2, वर्ष 1999-2000।

कोष, विश्व बैंक आदि के निर्देशन में तैयार होने लगी हैं। सामाजिक क्षेत्र में निवेश कम करने, अनुदान खत्म करने तथा सामाजिक सेवाओं को निजी क्षेत्र को सौंपने में राज्य सरकारें एक-दूसरे से होड़ करती जान पड़ती हैं। शिक्षा के लिए सकल राष्ट्रीय आय के 'छह प्रतिशत' के निवेश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की अनुशंसा का पालन आज तक नहीं हो पाया है। भारत में कुल शिक्षा बजट का 12 प्रतिशत नौवीं योजना में (1997-2000) उच्च शिक्षा पर व्यय करने का प्रावधान है। वित्तीय साधनों की कमी व पर्याप्त अनुदान न मिलने से देश के अधिकांश विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों की आर्थिक स्थिति शोचनीय है। आर्थिक कठिनाइयों के कारण पर्याप्त शिक्षण सामग्री न होने, बैठक व्यवस्था के अभाव, प्रयोगशाला में उपकरणों की कमी, पुस्तकालय में पुस्तकों की कमी, भवन की समस्या, फर्नीचर की समस्या का सामना करना पड़ता है। परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा एवं विकास एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि हमें विकास करना है तो उच्च शिक्षा के स्तर को सुधारना होगा और उच्च शिक्षा का स्तर तभी सुधरेगा जब उच्च शिक्षा पर कुल बजट का कम से कम 20 प्रतिशत खर्च किया जाए। उच्च शिक्षा व्यय में लगातार कमी हो रही है। चौथी योजना में कुल शिक्षा व्यय का 25 प्रतिशत उच्च शिक्षा पर व्यय किया गया था। यह नौवीं योजना में घटकर 12 प्रतिशत रह गया है। आज देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या 70.78 लाख है जबकि अध्यापकों की संख्या 3.31 लाख है। हमें उच्च शिक्षा में योग्य अध्यापकों की संख्या बढ़ानी होगी। आर्थिक साधनों की कमी का दोष उच्च शिक्षा को देना बंद करना होगा।

दोषपूर्ण परीक्षा प्रणाली

विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में प्रचलित परीक्षा प्रणाली निबंधात्मक है। परीक्षाओं में प्रश्न भी निबंधात्मक आते हैं जो संपूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित न होकर उसके एक अंश पर आधारित होते हैं। इसलिए वर्तमान परीक्षा प्रणाली में वैधता, व्यापकता, वस्तुनिष्ठता एवं विश्वसनीयता का पूर्ण अभाव है। इसके अतिरिक्त परीक्षा प्रणाली में आंतरिक परीक्षा का महत्व नहीं है। सन 1902 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग ने इस संबंध में मत व्यक्त किया था कि "भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा का महानतम दोष यह है कि शिक्षण परीक्षा के अधीन है न कि परीक्षा शिक्षण के।" फिर सन 1949 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने यह विचार प्रकट किया "यदि हमसे विश्वविद्यालय शिक्षा में केवल एक बात के बारे में सुझाव देने को कहा जाए तो यह सुझाव परीक्षाओं के संबंध में होगा।" परीक्षा प्रणाली के दोषों को दूर करना 21वीं सदी में उच्च शिक्षा के समक्ष एक चुनौती होगी। भारत में उच्च शिक्षा उन मुट्ठीभर लोगों के हाथों में है जिनके पास पैसा है। इससे गरीब व मध्यम वर्ग के लोग अच्छी शिक्षा से वंचित हो जाते हैं परिणामस्वरूप सामाजिक अलगाव व भेदभाव उत्पन्न होता है तथा ऊंच-नीच की खाई बढ़ती है। हमारे देश में उच्च शिक्षा में प्रलेखन सेवा का अभाव है। जब भी कोई नई खोज या शोध हो तो उसे राष्ट्रभाषा हिंदी में अनुवाद करने की सरकारी सुविधा होनी चाहिए ताकि राष्ट्र के सभी नागरिक उसका लाभ ले सकें।

निष्कर्ष

यदि 21 सदी में हम किसी भयंकर विपत्ति से घिरना नहीं चाहते तो हमें उच्च शिक्षा व अर्थव्यवस्था दोनों को मजबूत करना होगा। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था कैसी है इसका बोध सबको है किंतु प्रयास बोध किसी को नहीं। वास्तव में समस्या साधन या संख्या की नहीं, वातावरण और व्यवस्था की है। शिक्षा का परिणाम 15-20 वर्ष बाद सामने आता है। 20 वर्ष पहले हमसे जो चूक हुई थी उसका परिणाम शिक्षा और विकास दोनों क्षेत्रों में संकट बनकर आज हमारे सामने है। आज जरूरत है ऐसे शिक्षा स्वरूप की जो राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज के अंग के रूप में कार्य कर देश का विकास कर सके। तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी के विकास से उच्च शिक्षा अभियान को सरल व सुरुचिपूर्ण बनाना होगा। सी.डी., मल्टीमीडिया, फिल्म, रंगीन पुस्तकें आदि के विचार सुनने में तो अच्छे लगते हैं किंतु दूरदराज के गांवों व आदिवासी अंचलों में इनकी पहुंच एवं उपयोग एक चुनौती होगी। 21वीं शताब्दी में उच्च शिक्षा की सफलता को इन्हीं चुनौतियों के संदर्भ में तलाशना होगा। ❑

(सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य संकाय, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर, मध्य प्रदेश।)

आर्थिक विकास एवं मानव मूल्य

पी.के. वार्ष्णेय
अभय कुमार

किसी देश के आर्थिक विकास में यद्यपि यंत्र, उपकरण, कच्चा माल, वित्त आदि महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं परन्तु इनमें सबसे महत्वपूर्ण भूमिका स्वयं मनुष्य की है। प्रबंध एवं नियोजन के माध्यम से मनुष्य का पूर्ण बिकास किया जाए एवं इस प्रकार विकसित मानव अपनी पूर्ण क्षमता के साथ निष्ठापूर्वक कार्य करे तो निश्चित ही आर्थिक बिकास की गति में तीव्रता लाई जा सकती है, ऐसा लेखक का विश्वास है।

किसी भी देश का विकास उसकी सुदृढ़ आर्थिक अर्थव्यवस्था से पहचाना जा सकता है। अर्थव्यवस्था का सीधा संबंध आर्थिक विकास से है तथा आर्थिक विकास का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है मानव। आर्थिक विकास मानव के लिए होता है और मानव आर्थिक विकास से जीवन को सुखी एवं गौरवमय बनाता है। अत: आर्थिक विकास एवं मानव मूल्य परस्पर संबंधित हैं। आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है जिसमें देश के समस्त उत्पत्ति साधनों का कुशलतम एवं अनुकूलम विदोहन किया जाता है, राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति आय में निरंतर एवं दीर्घकालीन वृद्धि होती है तथा नागरिकों के जीवन-स्तर एवं सामान्य कल्याण का सूचकांक बढ़ता है।

विकसित राष्ट्र अमेरिका की संस्था 'ओवरसीज डेवलपमेंट कौंसिल' आर्थिक विकास का अर्थ अंग्रेजी शब्द 'पोली : फिजिकल क्वालिटी ऑफ लाइफ इंडेक्स' से लगाती है। इस संस्था के अनुसार आर्थिक विकास के सूचकांक में तीन तत्वों को शामिल किया जाता है: 1. प्रत्याशित आयु; 2. बच्चों की मृत्यु दर; एवं 3. साक्षरता। जिस राष्ट्र की प्रत्याशित आयु सबसे अधिक होती है उसे 100 अंक दिए जाते हैं। इसी प्रकार मृत्यु दर एवं साक्षरता के लिए भी अंक दिए जाते हैं। जिस राष्ट्र की प्रत्याशित आयु सबसे कम होती है उसे मात्र एक अंक दिया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक राष्ट्र के तीनों सूचकांकों का योग करके औसत निकाला जाता है। यदि किसी राष्ट्र के इस औसत सूचकांक में वृद्धि होती है तो इस लक्षण को आर्थिक विकास मानते हैं तथा यह माना जाता है कि राष्ट्र में भौतिक गुणों में वृद्धि हो रही है।

किसी भी देश का आर्थिक विकास वहां उपलब्ध मानव शक्ति की व्यवस्था एवं उसके विकास पर निर्भर करता है। नि:संदेह प्राकृतिक संसाधन, पूंजी निर्माण, तकनीकी व नवाचार, विदेशी सहायता, सामाजिक, धार्मिक व राजनैतिक संस्थाएं एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार आर्थिक विकास में अपनी भूमिका निभाते हैं परन्तु इनमें सबसे महत्वपूर्ण मानव है। मानव आर्थिक विकास के प्रत्येक घटक से जुड़ा है। उदाहरणस्वरूप एक कारखाने में अच्छी से अच्छी मशीनें और उच्च कोटि का कच्चा माल तब तक अपना कारगर प्रभाव नहीं डाल सकते जब तक कि उनका संचालक उनके प्रयोग में ईमानदारी न बरते। यही स्थिति सभी प्रकार के कार्यालयों की है, चाहे वे सरकारी हों या गैर-सरकारी। इतना ही नहीं, स्वास्थ्य एवं शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं, जिन पर जनता की सेवा का ठप्पा लगा है, में भी यही बात लागू होती है कि कार्यरत लोग अपने कार्य के प्रति कितने

ईमानदार हैं। कृषक एवं कारीगर अपने साधनों के स्वयं स्वामी हैं और अपने कारोबार से सीधे जुड़े हैं। कृषक की गरीबी, गांवों का पिछड़ापन, शहरों की ओर पलायन की ग्रामीणों की भावनाओं एवं गांव के स्वावलंबन की दृष्टि से अब यह पहले से अधिक महसूस किया जा रहा है कि कृषि और कुटीर उद्योगों के लिए अच्छे संसाधनों की आपूर्ति एवं उनके उत्पादन की उचित विक्रय व्यवस्था कर आर्थिक विकास की गति को तीव्र किया जा सकता है तथा ग्रामीण समस्याओं से भी निपटा जा सकता है।

यद्यपि आर्थिक विकास में यंत्र, उपकरण, कच्चा माल, वित्त आदि अपनी विशिष्ट भूमिका अदा करते हैं, परन्तु वास्तव में मानव इन सबमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह सत्य है कि भौतिक संसाधन मानव के लिए हैं, न कि मानव भौतिक संसाधनों के लिए। यदि प्रबन्ध एवं नियोजन के माध्यम से मानव का पूर्ण विकास किया जाए एवं ऐसे विकसित मानव अपनी पूर्ण क्षमता के साथ निष्ठापूर्वक कार्य करें तो निश्चित ही आर्थिक विकास की गति तीव्र होगी। यह सामान्य अनुभव की बात है कि यदि मनुष्य पूर्ण क्षमता से कार्य करता है तो भौतिक साधन भी पूर्ण क्षमता के साथ कार्य करेंगे क्योंकि आज के कंप्यूटर युग में भी उन्नत यंत्र मनुष्य की सक्रियता पर निर्भर करते हैं। मानव का व्यक्तित्व एक कली या अधखिले पुष्प की भांति है जिसमें सुप्रबंध द्वारा ही निखार लाया जा सकता है। जिस प्रकार एक कुशल माली अपनी बगिया को खाद-पानी देकर एवं प्रकाश आदि की उत्तम व्यवस्था करके वृक्षों की सुरक्षा करता है तथा ऐसे श्रेष्ठ वातावरण में ही वृक्ष पुष्पित व पल्लवित होकर सबको सुख-शांति प्रदान करते हैं, उसी प्रकार आर्थिक विकास रूपी उद्यान में सुप्रबंध रूपी माली मानव रूपी पर्यावरण को विकसित करके उच्च उत्पादकता रूपी पुष्पों एवं फलों से किसी भी देश के आर्थिक विकास को तीव्रतम कर सकता है। मानव के विकास में ही किसी भी देश का आर्थिक विकास छिपा है। मानव की आवश्यकता एवं महत्व को समझते हुए एक अमेरिकी विद्वान ने कहा था कि ''हम मोटरें, हवाई जहाज, फ्रिज, रेडियो या जूतों के फीते नहीं बनाते। हम बनाते हैं 'मनुष्य' और मनुष्य इन वस्तुओं का निर्माण करते हैं।'' इस तरह किसी भी देश के आर्थिक विकास से पूर्व वहां के निवासियों का विकास करना प्रथम कार्य होना चाहिए।

मात्र भौतिक संसाधनों के सहारे विकास करना पर्याप्त नहीं है जब तक कि इनके मूल में बैठे व्यक्ति को पूरी तरह न समझा जाए जो इन समस्त साधनों को व्यवस्थित करता है, नियंत्रित करता है एवं उनके साथ काम करता है। मनोवैज्ञानिकों ने आर्थिक विकास का रिश्ता मानव की कार्यक्षमता के साथ जोड़ा है।

आर्थिक विकास का प्रभाव—देश के आर्थिक विकास का उस देश की मानव-शक्ति पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रभाव को ''जनांकिकीय संक्रांति सिद्धांत'' के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। इस सिद्धांत के अनुसार किसी भी देश की मानवशक्ति को तीन चरणों से गुजरना पड़ता है—

1. जब देश अविकसित होता है तब अशिक्षा, बालविवाह एवं अन्य धार्मिक विश्वासों के कारण जन्म-दर अधिक होती है। साथ ही स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव में मृत्यु- दर भी अधिक होती है। अत: इस अवस्था में मानव शक्ति में कोई विशेष वृद्धि नहीं होती।
2. जब देश विकासशील अवस्था में होता है तब स्वास्थ्य सुविधाओं के बढ़ने के कारण मृत्यु-दर कम होती है लेकिन जन्म-दर में कोई विशेष कमी नहीं होती।
3. शिक्षा में वृद्धि एवं रहन-सहन का स्तर ऊंचा होने लगता है। रुढ़िवादी एवं परम्परावादी दृष्टिकोण लगभग समाप्त हो जाते हैं, उत्पादन बढ़ने लगता है जिससे जन्म-दर व मृत्यु-दर दोनों में कमी हो जाती है। इससे मानव शक्ति में वृद्धि दर भी कम हो जाती है और समाज में आर्थिक संतुलन की स्थिति पैदा होने लगती है।

मानव शक्ति का प्रभाव—यह माना जाता है कि किसी भी देश के आर्थिक विकास पर शुरू में मानव शक्ति में वृद्धि होने से अच्छा प्रभाव पड़ता है क्योंकि इसके बढ़ने से प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन होने लगता है। ऐसा होने से प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है। यह वृद्धि कुछ

समय तक चलती है। यदि निरंतर मानव शक्ति में वृद्धि होती रहती है तो इसका आर्थिक विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जिन देशों में पहले से ही मानव शक्ति अत्यधिक है वे राष्ट्र विकासशील या अल्पविकसित हैं। वहां बढ़ती मानव शक्ति आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है। इसी बाधा को हटाने के लिए मानव शक्ति नियोजन आवश्यक है।

भारत के सभी विधाओं के विद्वान यह मानते हैं कि तेजी से बढ़ती मानव शक्ति भारत के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधा है। मानव शक्ति वृद्धि से आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है जिसे निम्न तथ्यों से समझा जा सकता है:

1. पूंजी निर्माण की धीमी गति;
2. खाद्यान्न आपूर्ति की समस्या;
3. भुगतान संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव;
4. भूमि पर बढ़ता भार;
5. बेरोजगारी की समस्या;
6. कीमत-स्तर में वृद्धि;
7. जनोपयोगी सेवाओं के भार में वृद्धि;
8. श्रमशक्ति में वृद्धि;
9. आश्रितता के भार में वृद्धि;
10. कृषि एवं उद्योग के विकास में बाधा।

वर्तमान स्थिति : वर्तमान में भारत की मानव शक्ति 100 करोड़ को पार कर चुकी है। जनसंख्या की 74.3 प्रतिशत मानव शक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। 25.7 प्रतिशत मानव शक्ति शहरों एवं नगरों में निवास करती है। वर्ष 1991 की जनगणना के आधार पर 1000 पुरुषों पर 927 स्त्रियां हैं तथा शिक्षित मानव शक्ति 52.2 प्रतिशत है तथा मानव की प्रत्याशित आयु 65 वर्ष है। भारत में 14 वर्ष तक के बच्चों का कुल जनसंख्या में प्रतिशत 36 है जो अन्य देशों की तुलना में अत्यधिक है। फ्रांस में यह 24.7 प्रतिशत, अमेरिका में 21.2 प्रतिशत व ब्रिटेन में 29.6 प्रतिशत है। भारत में इस प्रतिशत को कम करने के लिए जन्म दर को कम करना नितान्त आवश्यक है। इससे आश्रितों की संख्या में कमी होगी जिससे जीवन-स्तर व बचत पर आर्थिक विकास के अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। सात प्रतिशत मानव शक्ति ऐसी है जिसकी आयु 60 वर्ष या अधिक है। 43 प्रतिशत मानव शक्ति बूढ़ों तथा बच्चों की है तथा शेष 57 प्रतिशत 15 वर्ष से लेकर 59 वर्ष आयु वालों की है। भारत की कार्यशील जनसंख्या मात्र 37.5 प्रतिशत है जो बहुत कम है। जर्मनी में यह 73 प्रतिशत, जापान में 50 प्रतिशत, ब्रिटेन में 45 प्रतिशत व फ्रांस में 43 प्रतिशत है। भारत की कार्यशील जनसंख्या का 38.7 प्रतिशत कृषि में, 26 प्रतिशत कार्यश्रमिक के रूप में, 2.1 प्रतिशत वन, मछली व बागान में, 10.6 प्रतिशत खानों, घरेलू उद्योग-धन्धों व वृहद् उद्योगों में, 7.4 प्रतिशत व्यापार एवं वाणिज्य में एवं शेष 15.2 प्रतिशत अन्य कार्यों में लगा है।

व्यक्ति के जीवन का क्या लक्ष्य है, समाज एवं परिवार के प्रति उसके क्या कर्तव्य हैं, राष्ट्रहित के सम्मुख स्वहित सर्वथा गौण हैं, आदि बातें आज की शिक्षा सिखा ही कहां पाती है। आज तो निजी स्वार्थ सर्वोपरि है। 'येन केन प्रकारेण' अपनी स्वार्थ साधना होनी चाहिए। बस यही मनोवृत्ति सर्वव्यापक है।

उपरोक्त के अलावा निम्नांकित तथ्यों पर भी ध्यान देना जरूरी है जिससे भारत के आर्थिक विकास को तीव्र किया जा सकता है—

1. सामान्यत: 2000 कैलोरी का भोजन भारत के प्रत्येक व्यक्ति को मिलता है जोकि अपौष्टिक व अपर्याप्त है। उचित स्वास्थ्य के लिए एक व्यक्ति को 3000 कैलोरी का भोजन मिलना चाहिए।
2. भारत में एक व्यक्ति को प्रतिदिन 400 ग्राम अनाज, 125 ग्राम दूध, 75 ग्राम सब्जी मिलती है जबकि उचित स्वास्थ्य के लिए 625 ग्राम अनाज, 500 ग्राम दूध व 250 ग्राम सब्जी की आवश्यकता है।
3. भारत सरकार के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार हमारे देश के एक व्यक्ति को प्रति वर्ष 8.1 किलोग्राम तेल, एक किलोग्राम वनस्पति घी, 14.6 किलोग्राम चीनी, 29.3 मीटर कपड़ा एवं घरेलू उपयोग के लिए मात्र 57.1 किलोवाट बिजली मिलती है जो उन्नत राष्ट्रों की तुलना में काफी कम है।

भारत पर विदेशी संस्थाओं एवं सरकारों के अरबों रुपये ऋण रूप में है। देश में उद्योगों के विकास की गति भी धीमी है। शिक्षा का स्तर निम्न है। भारत में 47.8 प्रतिशत मानव शक्ति अशिक्षित है।

विकास बनाम मानव मूल्य : मात्र भौतिक संसाधनों के सहारे विकास करना पर्याप्त नहीं है जब तक कि इनके मूल में बैठे व्यक्ति को पूरी तरह न समझा जाए जो इन समस्त साधनों को व्यवस्थित करता है, नियंत्रित करता है एवं उसके साथ काम करता है। मनोवैज्ञानिकों ने आर्थिक विकास का रिश्ता मानव की कार्यक्षमता के साथ जोड़ा है। यह कार्यक्षमता ही है जो मनुष्य के व्यवहार एवं आचरण से प्रभावित होती है।

1. आर्थिक विकास को गति देने के लिए मानव की मन:स्थिति का अध्ययन जरूरी है।
2. किसी भी देश के आर्थिक विकास एवं स्थायित्व के लिए कुछ मान्यताओं एवं मूल्यों का होना नितान्त आवश्यक है। उसके अभाव में समाज वस्तुत: चेतनाविहीन है। सादगी, संतोष, नैतिकता एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसे जीवन मूल्य अब कहां रह गए हैं। मानव मूल्यों के इस ह्रास ने भ्रष्टाचार को बल प्रदान किया है।
3. एक युग था जब विद्वान समाज का मार्गदर्शन करते थे। एक समय आया जब मार्गदर्शन की यह मशाल पूंजीपतियों के हाथ में चली गई। आज का युग राजनीतिज्ञों एवं सत्ताधारियों का है। शासन में लगे कथित शासक आज हमारे आदर्श बने हुए हैं।
4. जीवन ऊंचा उठाने का अर्थ हमने मात्र भौतिक सुख-सुविधाओं को एकत्र करने से लिया है। इसीलिए आज हर श्रेणी का व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को बढ़ाने और फिर सही-गलत किसी भी प्रकार से उन्हें पूरा करने में जुटा हुआ है।
5. शिक्षा ही मानव और समाज को संवारती व बिगाड़ती है लेकिन शिक्षा का अर्थ केवल साक्षर होना नहीं है। शिक्षा का एक बड़ा उद्देश्य मनुष्य में अच्छे संस्कारों की नींव डालना है। इस दृष्टि से आज की संपूर्ण शिक्षा लक्ष्य-शून्य है।
6. व्यक्ति के जीवन का क्या लक्ष्य है, समाज एवं परिवार के प्रति उसके क्या कर्तव्य हैं, राष्ट्रहित के सम्मुख स्वहित सर्वथा गौण है, आदि बातें आज की शिक्षा सिखा ही कहां पाती है। आज तो निजी स्वार्थ सर्वोपरि है। 'येन केन प्रकारेण' अपनी स्वार्थ साधना होनी चाहिए। बस। यही मनोवृत्ति सर्वव्यापक है।
7. रुपया-पैसा ही सब कुछ है। इसी के बल पर सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है, यहां तक कि मान-सम्मान भी। यही कारण है कि भ्रष्टाचार और कालाबाजारी जैसी अवांछनीय गतिविधियों में लिप्त लोग समाज में पूरा सम्मान पाए हुए हैं।
8. भौतिक संसाधनों की बराबरी की इस प्रतियोगिता में हमारी आवश्यकताएं बहुत बढ़ गई हैं। इसने हमारे असंतोष को बढ़ाया है तथा मानव की कार्यक्षमता को कुंठित भी किया है। अंतत: इसका प्रभाव उत्पादकता वृद्धि पर पड़ा है जिससे देश के आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। ❑

(वरिष्ठ प्रवक्ता, वाणिज्य संकाय एवं रीडर, स्नातकोत्तर, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर (उत्तर प्रदेश)।)

आवश्यक वस्तु अधिनियम और कालाबाजारी की रोकथाम

केन्द्र सरकार देश में उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर आवश्यक वस्तुएं सुलभ कराने के लिए राज्य सरकारों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों द्वारा आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 के प्रावधानों के कार्यान्वयन संबंधी कार्यवाही की निरंतर निगरानी करती है। उपभोक्ता मामले विभाग की वर्ष 2000-01 की वार्षिक रिपोर्ट में बताया गया है कि पिछले वर्ष 31 दिसम्बर तक इस अधिनियम के तहत कुल 1,60,635 छापे डाले गए, 5793 लोगों को गिरफ्तार किया गया, 1625 लोगों को सजा दी गई और 1948.43 लाख रुपये मूल्य की वस्तुएं जब्त की गईं। कालाबाजारी और आवश्यक वस्तु आपूर्ति अधिनियम, 1980 के प्रावधानों के तहत राज्य सरकारों ने 229 मामले दर्ज किए। सबसे अधिक यानी 179 मामले गुजरात में दर्ज किए गए।

नवगठित उत्तरांचल राज्य
महिला-केंद्रित विकास की आवश्यकता

दलीप सिंह

उत्तरांचल जैसे विकट भौगोलिक क्षेत्र में आज जो भी विकास नजर आता है वह यहां की महिलाओं की कर्मठता से ही संभव हो सका है क्योंकि अधिकांश युवक यहां से पलायन कर अन्य स्थानों पर चले गए हैं। अत: राज्य के सर्वांगीण विकास के लिए महिलाओं को शिक्षित करना एवं उनमें जाग्रति लाना अत्यंत आवश्यक है। लेखक के विचार में यह महिलाओं के लिए ही नहीं, वरन सामरिक दृष्टि से संवेदनशील इस राज्य एवं राष्ट्र दोनों के हित में होगा।

किसी भी देश का विकास उस क्षेत्र के मानव संसाधनों पर निर्भर करता है। जिस देश का मानव जितना अधिक प्रशिक्षित व बुद्धिजीवी होगा, वह देश के विकास की गति में उतना ही अग्रणी होगा। इसीलिए विभिन्न युगों में उभरने वाली विश्व सभ्यताओं के निर्माण और पतन का श्रेय भी मानव को ही दिया जाता है। अत: किसी भी क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उत्थान में वहां की श्रम-शक्ति का आकार, कार्य का गुणात्मक स्वरूप तथा कार्य में नियमितता का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान होता है। लेकिन किसी भी क्षेत्र का सर्वांगीण विकास तभी संभव है जब उसमें महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार एवं समानता प्राप्त हो। यदि जनगणना आंकड़ों पर दृष्टिपात करें तो भ्रूण (बच्ची) हत्या के बाद भी समाज की आधी आबादी महिलाओं की है जिन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़े बिना किसी भी क्षेत्र, राज्य, समाज या देश के आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय एवं राजनीतिक विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महिलाओं के उत्थान एवं विकास के लिए अनेक कार्यक्रम चलाए गए। कानून एवं अधिनियम बनाए गए तथा वर्तमान समय में संसद एवं विधानसभाओं में महिलाओं को समान प्रतिनिधित्व देने के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का विधेयक संसद में विचाराधीन है। भारतीय संविधान भाग 3, अनुच्छेद 15 नागरिकों को समानता का अधिकार प्रदान करते हुए लिंग, जाति, धर्म, भाषा, नस्ल, क्षेत्र आदि के आधार पर भेदभाव को नकारता है और सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से पिछड़े वर्गों, विशेषत: महिलाओं, बच्चों तथा श्रमिकों को समुचित संरक्षण प्रदान करने का निर्देश देता है। लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि आजादी के 54 वर्षों बाद भी हम समाज में इस भेदभाव को मिटाकर समानता लाने में असफल रहे हैं।

यदि उत्तरांचल के सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं की स्थिति का अवलोकन करें तो पाएंगे कि विकास प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के बावजूद उनके कार्यों को समाज में नगण्य एवं गौण समझा जाता है। यही कारण है कि उत्तरांचल की अर्थव्यवस्था की रीढ़ कही जाने वाली महिलाओं को ध्यान में रखकर न तो योजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है, न ही कभी उन्हें इन योजनाओं के निर्माण में शामिल किया जाता है। हालांकि शहरी क्षेत्रों में महिलाएं विकास की मुख्यधारा से जुड़ने लगी हैं लेकिन जब हम उत्तरांचल के सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों की बात करते हैं तो यहां महिलाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, पेयजल, विद्युत

आदि बुनियादी आवश्यकताओं के लिए भी यहां की महिलाएं मोहताज बनी हुई हैं। यद्यपि 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण के बाद पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है, किंतु आज भी उनके अधिकारों का उपयोग तथा उपभोग उनके पति या रिश्तेदारों द्वारा किया जाता है। यहां तक कि लोग उसके स्थान पर उनके पति को ही प्रतिनिधि कहकर पुकारते हैं तथा ग्रामसभा की बैठकों में भी उनके पति ही भाग लेते हैं। कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण मामलों को छोड़कर अधिकतर मामलों में उनके पति द्वारा ही हस्ताक्षर कर लिए जाते हैं जोकि लोकतांत्रिक व्यवस्था में महिला प्रतिनिधियों के अधिकारों का हनन है। दूसरी ओर, महिला प्रतिनिधि को अपने घरेलू कार्यों से फुर्सत ही कहां है जो वह इस विषय में सोच सके। महिलाओं की भूमिका के संबंध में पारस्परिक विश्वासों, सामाजिक और सांस्कृतिक बंधनों तथा निर्णयों में सीमित सहभागिता ने महिलाओं को घर और कृषि कार्यों तक ही सीमित कर दिया है। महिलाओं के विवेक और ज्ञान को पुरुष प्रधान समाज द्वारा आज भी कोई विशेष महत्व नहीं दिया जाता।

यदि कार्यों के आबंटन के बारे में देखा जाए तो यहां की महिलाएं गृह कार्य के अतिरिक्त, कृषि कार्य, गुड़ाई, निराई, कटाई, मंडाई, गोबर निकालना, खेतों की सफाई, दूध दुहना, पशुओं को चराना, खरीददारी, गांव के सामाजिक कार्यों में हिस्सेदारी, पहाड़ी क्षेत्रों से घास व लकड़ी की व्यवस्था, 5 से 10 किलोमीटर की दूरी से पानी का प्रबंध आदि सभी कार्य करती हैं। यही नहीं, 5 वर्ष से अधिक आयु वर्ग की बालिकाएं अपने छोटे भाई-बहनों की देखभाल, भोजन बनाना, लकड़ी लाना, पशु चराना, बर्तन साफ करना, पानी भरना आदि अनेक कार्यों में अपनी मां के साथ हाथ बंटाती नजर आती हैं। इसके विपरीत बालक इस अवस्था में खेलने-कूदने में ही मस्त रहते हैं जो माता-पिता द्वारा बचपन से ही बालक-बालिकाओं में किए जाने वाले भेदभाव को उजागर करता है। इस पर्वतीय राज्य में हल चलाने को छोड़कर 90 प्रतिशत से अधिक कार्य महिलाओं द्वारा ही संपादित किए जाते हैं। प्रतिदिन लगभग 16-18 घंटे कठिन परिश्रम के बाद भी महिलाएं दो जून की रोटी चैन से नहीं खा पाती। सन 1957 में कृषि मंत्रालय के द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार हिमालय क्षेत्र में एक बैल की जोड़ी एक हेक्टेयर खेत में 1064 घंटे, एक किसान 12 घंटे एवं एक महिला कृषक 3085 घंटे कार्य करती है। महिलाओं का यह कार्य बैलों की जोड़ी एवं पुरुष किसान के मिले-जुले कार्य से कई घंटे अधिक है। यही नहीं, घास एवं लकड़ी की व्यवस्था में लीन महिलाएं जंगलों में कभी बाघ जैसे जंगली जानवर की शिकार हो जाती हैं तो कभी पहाड़ी और पेड़ से गिरने के कारण आकस्मिक मृत्यु का ग्रास बनती हैं। अत्यधिक कार्यभार तथा पौष्टिक तत्वों की कमी के कारण 60 प्रतिशत से अधिक महिलाएं ल्यूकोरिया, कुपोषण, प्रसूति, गठिया, मोतियाबिंद, दमा, टी.बी. आदि जानलेवा बीमारियों से पीड़ित हैं। ऊपर से शौचालयों एवं स्नानागृहों की सुविधा न होने तथा कार्यों की अधिकता के कारण महिलाएं अपनी स्वच्छता एवं स्वास्थ्य के प्रति उचित ध्यान नहीं दे पातीं। इसके अलावा पहले तो यहां स्वास्थ्य सुविधाएं हैं ही नहीं और हैं भी तो चिकित्सा केंद्रों का गांवों से दूर होना, यातायात सुविधाओं का अभाव, पहाड़ की विकट भौगोलिक स्थिति तथा उपलब्ध स्वास्थ्य केंद्रों में दवाईयों, डाक्टरों या स्वास्थ्य संबंधी कर्मचारियों के अभाव के कारण महिलाओं को उचित उपचार नहीं मिल पाता और अधिकतर मरीज वहीं दम तोड़ देते हैं। उत्तराचंल की महिलाओं का इससे बड़ा दुर्भाग्य क्या हो सकता है कि 21वीं सदी में भी प्रसव प्रक्रिया पुरानी परंपराओं (दाई) द्वारा करवाई जाती है, जोकि अत्यंत जोखिम भरा होने के कारण कभी-कभी महिलाओं की मृत्यु का कारण भी बन जाता है।

कार्यों के आबंटन के बारे में देखा जाए तो यहां की महिलाएं गृह कार्य के अतिरिक्त, कृषि कार्य, गुड़ाई, निराई, कटाई, मंडाई, गोबर निकालना, खेतों की सफाई, दूध दुहना, पशुओं को चराना, खरीददारी, गांव के सामाजिक कार्यों में हिस्सेदारी, पहाड़ी क्षेत्रों से घास व लकड़ी की व्यवस्था, 5 से 10 किलोमीटर की दूरी से पानी का प्रबंध आदि सभी कार्य करती हैं।

यदि उत्तरांचल की आर्थिक स्थिति का आकलन किया जाए तो यह बात स्पष्ट रूप से सामने आती है कि आज इस विकट भौगोलिक क्षेत्र में जो कुछ भी विकास नजर आता है वह यहां की महिलाओं की कर्मठता एवं कठोर परिश्रम से ही संभव हो सका है। इसीलिए महिलाओं को यहां की अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहा जाता है। इस पहाड़ी राज्य की संपूर्ण सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था की धुरी महिलाएं ही हैं। नहीं तो पलायन कर गए युवाओं से सूना पड़ा यह क्षेत्र कभी का बंजर और खंडहर हो गया होता। यहां की अर्थव्यवस्था में महिलाओं की श्रमशक्ति का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि जहां उत्तर प्रदेश में महिलाओं की कुल जनसंख्या का मात्र 7.5 प्रतिशत महिला कर्मकार हैं वहीं उत्तरांचल में कुल महिलाओं का 35.2 प्रतिशत हिस्सा महिला कर्मकारों का है जोकि उत्तर प्रदेश की तुलना में 5 गुना अधिक है। यह स्थिति उत्तरांचल के सामाजिक तथा आर्थिक विकास में महिलाओं की संलग्नता को उजागर करती है और ऐसी स्थिति में यहां किसी भी कार्यक्रम की सफलता महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के बिना संदिग्ध है। फिर भी विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में उनकी उपेक्षा बरकरार है। उत्तरांचल के सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय जीवन में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान होते हुए भी उनकी स्थिति दयनीय बनी हुई है। जानी-मानी समाजसेवी राधा भट्ट का कहना है कि ''ग्रामीण महिलाएं जोकि ग्रामीण जीवन की मेरुदंड हैं, की वास्तविकता यह है कि दुनिया भर के विकास कार्यों में तकनीकी प्रगति एवं करोड़ों रुपये की योजनाओं के बावजूद पहाड़ी महिलाओं के कष्टों में कमी होने की बजाय वृद्धि ही हुई है।''

अत: ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के अभाव के कारण जहां महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति कमजोर है वहीं स्वास्थ्य की स्थिति भी दयनीय बनी हुई है क्योंकि उचित ज्ञान व जानकार के अभाव में महिलाएं मानसिक रूप से अंधविश्वासी हैं। इन अंधविश्वासों में सर्वाधिक देवी-देवताओं और भूत-प्रेतों को ही माना जाता है। आज भी किसी महिला के बच्चा न होने या मृत्यु की स्थिति में उपचार की जगह भेड़-बकरी या मुर्गे द्वारा भूत-प्रेतों को पूजने की प्रथा ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वत्र प्रचलित है। इसी प्रकार हर गांव में कुल देवताओं को खुश करने के लिए बकरी की बलि दी जाती है। इसको जहां अंधविश्वास एवं रूढ़िवादी प्रथाओं से जोड़ा जाता है वहीं वास्तविकता यह है कि स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव में इसके अलावा कोई विकल्प भी नहीं है।

नवगठित उत्तरांचल राज्य से जहां एक ओर बुद्धिजीवी, शिक्षित तथा धनाढ्य वर्ग लगातार पलायन करता जा रहा है, वही बचे-खुचे युवाओं को बढ़ती शराबखोरी एवं जुए की लत ने तबाह कर दिया है जिसका दुष्प्रभाव यहां की महिलाओं पर पड़ रहा है जो यहां की मुख्य श्रमशक्ति के रूप में कार्य कर रही हैं। पिछले कुछ वर्षों से नेपालियों, बिहारियों तथा बंगलादेशियों की बढ़ती संख्या ने महिलाओं की समस्या को और बढ़ा दिया है, क्योंकि एक ओर खेती पर नेपालियों का अधिकार होता जा रहा है तो दूसरी ओर मजदूरी पर बिहारी एवं बंगलादेशियों ने कब्जा जमा लिया है जिससे चोरी, डकैती, लूटपाट, अपराध, महिलाओं के साथ छेड़छाड़, बलात्कार, यहां तक कि लड़कियों को भगाए जाने की घटनाएं भी लगातार बढ़ रही हैं। शराब का कारोबार इतना फल-फूल रहा है कि हर छोटे-बड़े शहर में सरकारी शराब की दुकानें खुल गई हैं और रही-सही कसर नेपालियों तथा ग्रामीण लोगों द्वारा निकाली जानी वाली कच्ची शराब ने पूरी कर दी है। शराबियों के उत्पाद के कारण धीरे-धीरे महिलाओं का घर से बाहर निकलना इस देवभूमि उत्तरांचल में दूभर होता जा रहा है। उत्तरांचल की सामाजिक संरचना धीरे-धीरे ध्वस्त होती जा रही है और कभी अपने घरों में ताले न लगाने वाली यहां की महिलाएं आज भय के वातावरण में जीने को अभिशप्त हो गई हैं।

अत: उत्तरांचल का सर्वांगीण विकास तभी संभव है जब यहां की महिलाओं को शिक्षित, प्रशिक्षित किया जाए तथा उनमें जनजाग्रति लाई जाए। इसके अलावा राज्य के लिए बनाई जानी वाली योजनाओं तथा उनको क्रियान्वित करने में महिलाओं को सम्मिलित किया जाना आवश्यक है। यही नहीं, महिला केंद्रित विकास योजनाओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। यह मात्र महिलाओं के विकास के लिए ही नहीं वरन सीमांत एवं सामरिक दृष्टि से संवेदनशील होने के कारण राज्य एवं राष्ट्र दोनों के हित में होगा। ❑

(लेखक, हे.नं.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय (उत्तरांचल) के राजनीति विज्ञान विभाग से संबद्ध हैं।)

बाल श्रमिकों के जीवन के कुछ पहलू : एक अध्ययन

नीरज दूबे

बाल श्रम का उद्भव तब हुआ जब पूंजीवादी वर्ग द्वारा मुनाफा बढ़ाने के उद्देश्य से बच्चों का सामाजिक एवं अमानवीय शोषण किया गया। आज विश्वभर में इनकी संख्या काफी बढ़ चुकी है। भारत में विश्व के एक-चौथाई बाल श्रमिक होने का अनुमान है। प्रस्तुत है मध्य प्रदेश के रायसेन जिले की बरेली तहसील में किए गए एक अध्ययन की रिपोर्ट जिसमें लेखक का कहना है कि जब तक समाज का प्रत्येक तबका हृदय से बाल श्रम के विरुद्ध प्रवृत्त नहीं होगा, तब तक बाल श्रमिकों की मुक्ति अकल्पनीय है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार 18 वर्ष से कम आयु का श्रमिक बाल श्रमिक है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई.एल.ओ.) के अनुसार 15 वर्ष या उससे कम आयु का श्रमिक बाल श्रमिक है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1966 में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय इकरारनामा सम्मेलन में आह्वान किया गया कि—"प्रत्येक देश एक ऐसी आयु सीमा निर्धारित करे, जिससे कम आयु के श्रमिकों की नियुक्ति प्रतिबंधित व दंडनीय हो"। अमेरिकी कानून के मुताबिक 12 वर्ष या कम आयु तथा इंग्लैंड व अन्य यूरोपीय देशों में 13 वर्ष या कम आयु के श्रमिकों को बाल श्रमिकों की श्रेणी में रखा गया है।

भारतीय संविधान इस मुद्दे पर प्रारंभ से ही स्पष्ट है। वहां 9 से 14 वर्ष के बीच के बालक/बालिका जो वैतनिक श्रम करते हैं अथवा श्रम द्वारा पारिवारिक कर्ज चुकाते हैं, बाल श्रमिक हैं।

बाल श्रम का उद्भव तब हुआ जब पूंजीवादी वर्ग द्वारा मुनाफा बढ़ाने के उद्देश्य से मजदूरों के बच्चों का सामाजिक व अमानवीय शोषण किया गया। जहां अमेरिका में पूंजीवादी व्यवस्था की मजबूती हेतु दास प्रथा का प्रादुर्भाव हुआ, वहीं पूंजीवाद के जन्मदाता देश इंग्लैंड से लेकर प्रायः सभी पूंजीवादी देशों में बाल श्रमिकों के उपयोग का आंकड़ा निरंतर बढ़ता गया। इसी स्वार्थवश सामंती काल में बालश्रम को सामाजिक बुराई के रूप में नहीं देखा गया।

1853 में इंग्लैंड में "चार्टिस्ट आंदोलन" ने सर्वप्रथम बालश्रम की अमानवीय प्रक्रिया की ओर विश्व का ध्यान आकृष्ट किया। उसी समय विक्टर ह्यूगो, आस्कर बाइन्ड आदि साहित्यकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से इस विषय को गंभीरता प्रदान की।

मानव श्रम का सही मूल्य न देकर अधिक काम लेने की पूंजीवादी प्रवृत्ति की देन है—बाल श्रमिकों का इस्तेमाल। इस प्रवृत्ति को समाजशास्त्रियों ने चार सिद्धांतों में बांटा है:

1. नवपुरातनवादी सिद्धांत

इस सिद्धांत के अंतर्गत बच्चों को उपभोग व निवेश की सामग्री मानकर उनके श्रम का उपयोग आय बढ़ाने हेतु किया जाता है। यहां बच्चों को पढ़ाने का खर्च बचाकर श्रम कराने पर जोर दिया जाता है। अतः ज्यादा बच्चों व बाल श्रम का अभिन्न संबंध है। इस सिद्धांत को मानने वाले टी. अख्तर, ह्यूज एच.जी. लिविस, एम.टी. फेन, डी.सी. काल्डवेल हैं।

2. समाजीकरण का सिद्धांत

इसके तहत बाल श्रम का इस्तेमाल पारिवारिक प्रक्रिया के

अंतर्गत किया जाता है। कृषि, घरेलू उद्योग इसके अंतर्गत आते हैं। जी. रोजर्स, स्टेन्डिंग जी. मेयर आदि इसके नियामक हैं।

3. श्रम बाजार के विखंडन का सिद्धांत

अविकसित देशों में पूंजीवादी उत्पादन व्यवस्था ने श्रम बाजार को दो हिस्सों में बांटा है। बड़ा किसान व छोटा किसान या दस्तकार। बाजार की यह टूटन मालिक-श्रमिक संबंधों का आधार है। इसके मानने वाले सी. केर, डी.एम. गोर्डन, तथा एडवर्ड्स आदि हैं।

4. मार्क्सवादी सिद्धांत

मार्क्स ने कहा था कि बाल श्रम पूंजीवादी व्यवस्था का अभिन्न अंग है। नई तकनीक सस्ते व अकुशल मजदूरों की मांग करती है और बेरोजगारी के कारण बच्चे भी औद्योगिक श्रमिकों के संचित दल का हिस्सा बन जाते हैं।

आंकड़े

भारत सरकार के श्रम मंत्रालय द्वारा 1996 में किए गए एक अध्ययन के अनुसार देश में 4.4 करोड़ बाल श्रमिक हैं। राष्ट्रीय न्यायिक सर्वेक्षण ने भारत में वर्तमान में करीब 1.4 करोड़ बाल श्रमिक होने का अनुमान लगाया है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का अनुमान है कि भारत में 25 करोड़ बाल श्रमिक हैं, जिसमें 12 करोड़ बच्चे पूरा वक्त काम करते हैं। विश्व बैंक की मानव विकास रिपोर्ट 1996 के अनुसार भारत में 10 से 14 करोड़ के बीच बाल श्रमिक हैं जबकि आई.एल.ओ. की धारणा है कि पूरे विश्व के एक चौथाई बाल श्रमिक भारत में श्रमशील हैं अर्थात उपयुक्त आंकड़ों में बड़ा फर्क है। भारत सरकार की एजेंसियों ने घरेलू कार्य करने वाले बच्चों को अपने आंकड़ों में स्थान नहीं दिया है, जबकि विश्व बैंक, आई.एल.ओ. जैसी संस्थाओं ने घरेलू, पारंपरिक, सामाजिक, यहां तक कि स्वयं के घर में स्वयं का कार्य करने वाले बच्चों को भी बाल श्रमिक माना है। ऐसे में शक होने लगता है कि कहीं ये आंकड़े अनुमान तो नहीं हैं?

बाल श्रमिक की भयानकता व अमानवीयता को आंकड़ों से नहीं नापा जा सकता। इनमें लाखों बच्चे ऐसे पेशों व उद्योगों में लगे हैं जो जोखिम भरा, खतरनाक व शोषणकारी हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने बीस देशों में सर्वेक्षण किया जिससे यह पता चलता है कि करीब 70 प्रतिशत श्रमजीवी बच्चे गंभीर जोखिमों का सामना करते हैं और उन्हें गंभीर चोट लगती है, वे जल जाते हैं, उन्हें त्वचा की बीमारियां हो जाती हैं, आंखों की रोशनी कम हो जाती है, बधिर हो

तालिका-1

बाल श्रमिकों की क्षेत्रीय स्थिति

क्र.सं.	क्षेत्रीय स्थिति	संख्या	प्रतिशत
1.	क्षेत्रीय	32	64
2.	विस्थापित	18	36
	योग	50	100

तालिका-2

चयनित बाल श्रमिकों की आयु

क्र.सं.	बाल श्रमिक	4 से 6 वर्ष	7 से 9 वर्ष	9 से अधिक
1.	बालक	6	14	18
2.	बालिका	1	9	2
	योग	7	23	20

तालिका-3

उद्योग-जिनमें चयनित बच्चे लिप्त हैं

क्र.सं.	व्यवसाय	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	गिट्टी खदान-क्रेशर	15	30
2.	होटल - चाय की दुकान	10	20
3.	घरेलू कार्य	14	28
4.	ईंट के भट्टे	10	20
5.	अन्य	1	2
	योग	50	100

बालश्रम के प्रति समाज में व्याप्त उपेक्षा का जीता-जागता उदाहरण हैं ये बच्चे

जाते हैं या सांस की बीमारी हो जाती है। घरेलू सर्वेक्षण से भी पता चलता है कि 80 प्रतिशत बच्चे सप्ताह के पूरे सात दिन काम करते हैं। विकासशील देशों में श्रमजीवी बच्चों का दो-तिहाई ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है और उनमें करीब तीन-चौथाई कृषि व संबंधित कार्यकलापों में लगे हैं। 70 प्रतिशत श्रमजीवी बच्चे अवैतनिक हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में यह प्रतिशत 81 है।

बाल श्रमिकों की समाज में स्थिति का पता लगाने के उद्देश्य से बरेली (म.प्र.) तहसील के 50 बाल श्रमिकों का सर्वेक्षण किया गया। प्राप्त तथ्य बेहद दु:खद व दहला देने वाले हैं तथा शूद्र से लेकर उच्चकोटि ब्राह्मण (गरीब) बच्चे तक इस शोषण के शिकार हैं। सर्वेक्षित बच्चों में 38 बालक व 12 बालिकाएं हैं।

अध्ययन क्षेत्र व प्रणाली

प्रस्तुत अध्ययन हेतु म.प्र. के रायसेन जिले की तहसील बरेली को चुना गया। इस तहसील में बाल श्रमिकों की संख्या अपेक्षाकृत ज्यादा है, क्योंकि यहां ईंट-भट्टे तथा गिट्टी खदान/क्रेशर का काम ज्यादा होता है। अध्ययन को तथ्यपरक बनाने हेतु बाल श्रमिकों के मालिकों से छुपाकर साक्षात्कार के साथ-साथ आस-पास के गांवों के कुछ निवासियों से तथा सरकारी कर्मचारियों से सामान्य जानकारी वार्ता द्वारा प्राप्त की गई।

चयनित बाल श्रमिकों का विवरण

सर्वेक्षण हेतु चुने गए 50 बाल श्रमिकों में से 32 अर्थात 64 प्रतिशत बाल श्रमिक क्षेत्रीय हैं जबकि 18 अर्थात 36 प्रतिशत बाल श्रमिक विस्थापित हुए हैं। चयनित बाल श्रमिकों में से 6 बालक व 1 बालिका 4 से 6 वर्ष आयु समुह के हैं, 14 बालक व 9 बालिकाएं 7 से 9 वर्ष के आयु समूह के हैं जबकि 18 बालक व 2 बालिकाएं 9 वर्ष से ज्यादा उम्र के हैं। चयनित बाल श्रमिकों में से 15 बाल श्रमिक (30 प्रतिशत) गिट्टी खदान/क्रेशर में कार्यरत हैं, 10 बाल श्रमिक (20 प्रतिशत) होटल व चाय की दुकानों

में, 14 बाल श्रमिक (28 प्रतिशत) घरों में घरेलू कार्यों में और 10 बाल श्रमिक (20 प्रतिशत) ईंट के भट्टों में कार्य कर रहे हैं जबकि 1 बाल श्रमिक (2 प्रतिशत) खोमचा लगाता है।

विद्यालय जाने के इच्छुक बच्चों की संख्या 38 (76 प्रतिशत) रही जबकि 12 बच्चों (24 प्रतिशत) ने विद्यालय जाने के प्रति अरुचि प्रदर्शित की जिसका कारण उन्होंने शिक्षक द्वारा पिटाई करना बताया। एक 11 वर्षीय बालक ने कहा कि "पढ़कर भी हम गरीबों का कुछ नहीं होता, समय खराब करने से क्या फायदा"।

प्रस्तुत सर्वेक्षण के दौरान यह तथ्य पुष्ट हुआ कि गरीब तबके से अधिकांश बाल श्रमिक आते हैं तथा ज्यादातर बाल श्रमिक पिछड़ी, गरीब, शोषित जाति, धर्म या समूहों से आते हैं। आर्थिक असमर्थता माता-पिता को अपने बच्चों के अमानवीय व अनैतिक शोषण के प्रति आंख-कान बंद कर लेने को विवश करती है। इस मजबूरी को शोषित वर्ग अच्छी तरह पहचानता है।

निष्कर्ष

बाल श्रम का मूल कारण है समाज में बालश्रम के प्रति व्याप्त उपेक्षा। घर-घर छोटे-छोटे बच्चों का काम करना इसका सबूत है। जिन बच्चों से समाज का प्राय: हर तबका वयस्कों के समान व किन्हीं परिस्थितियों में उनसे भी ज्यादा काम लेता है, उन्हें ही बच्चा मानकर अपना संगठन बनाने की छूट न देना स्वार्थपूर्ण है। बच्चों से कम वेतन पर अधिक काम लेना, उनसे गुलामों की भांति व्यवहार करना, मामूली त्रुटियों पर मानसिक व शारीरिक उत्पीड़न दुर्दान्त सजाएं आम हैं। 40 प्रतिशत बच्चों ने कार्य के दौरान मारपीट व 32 प्रतिशत बच्चों ने सामान्य मारपीट की शिकायत की, किंतु बालिका वर्ग इससे प्राय: अछूता है। 78 प्रतिशत बच्चों ने गाली व अभद्र व्यवहार, 92 प्रतिशत बच्चों ने अत्यधिक कार्य व 72 प्रतिशत बच्चों ने बेवक्त कार्य की शिकायत की। बेवक्त श्रम करने वालों में होटल व चाय की दुकान पर काम करने वाले बच्चों से सुबह 6 बजे से 12-1 बजे रात तक अनवरत कार्य कराया जाता है, जबकि कुछ घरेलू कार्य करने वाले बाल श्रमिकों से भी बेवक्त सोते से उठाकर न केवल कार्य कराया जाता है बल्कि कार्य बिगड़ जाने या कुछ आर्थिक नुकसान हो जाने की सूरत में भूखा भी रखा जाता है।

सर्वेक्षण से पता चला कि चयनित बच्चों को कोई संतोषजनक स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध नहीं है। बस घरेलू बाल श्रमिकों पर उनके मालिक कुछ ध्यान देते हैं। इनकी शिक्षा-दीक्षा में किसी भी बाल श्रमिक के मालिक की कोई रुचि नहीं है। ना ही बाल श्रमिकों के लिए बनाए गए स्वास्थ्य व अधिकार संबंधी किसी कानून का ज्ञान उन्हें है, न ही वे उनके पालन के प्रति सजग हैं।

बच्चों को इस शोषण से बचाने के लिए एक समन्वित नीति की आवश्यकता है। सतत विकास, ढांचे का अधिक समतावादी होना, आधुनिक क्षेत्रों का तेजी से विस्तार, अनिवार्य स्कूली शिक्षा, कारगर जनसंख्या नीति व गरीबी-रेखा से नीचे रहने वालों की संख्या में लगातार कमी के ठोस उपाय बाल श्रम उन्मूलन हेतु अत्यावश्यक हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने एक अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम बाल श्रमिकों के लिए तैयार किया है किन्तु यह मात्र औपचारिक क्षेत्र में लाभप्रद है, जबकि बड़ी संख्या में बाल मजदूर अनौपचारिक क्षेत्रों में कार्य करते हैं।

बालश्रम के पूर्ण उन्मूलन का लक्ष्य तो अधिकांश देशों की तात्कालिक पहुंच से बाहर है किंतु इसमें सभी के लिए मानवाधिकार आयोग व गैर-सरकारी संगठनों के बीच एक साझेदारी बन सकती है। इस दिशा में गैर-सरकारी संगठनों का कार्य सराहनीय है। जब तक समाज का हर वर्ग, हर तबका हृदय से बाल श्रम के विरुद्ध प्रवृत्त नहीं होगा, बाल श्रमिकों की मुक्ति अकल्पनीय है। बाल श्रमिक शोषण के विरुद्ध विभिन्न सजाओं का प्रावधान अप्रभावी आपराधिक न्यायप्रणाली के कारण कमजोर हो जाता है। अपराध कड़ी सजा के प्रावधान मात्र से नहीं रुकते; अपराध की सजा अवश्य मिलेगी यह सुनिश्चित किए जाने से उनमें वास्तविक कमी आती है। ❑

(विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बरेली, जिला रायसेन, मध्य प्रदेश।)

विकास प्रक्रिया में सूचना के अधिकार का महत्व

सुरेन्द्र कटारिया

आर्थिक नियोजन के वर्तमान दौर में विकास का मूलाधार बनी 'सूचना' को अधिकार रूप में मांगने की प्रवृत्ति निरंतर बढ़ रही है। विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में निरक्षरता, अल्प जागरूकता तथा संकीर्ण सामाजिक-राजनीतिक दुरभिसंधियों के चलते प्रशासनिक भ्रष्टाचार एवं अकर्मण्यता अधिक व्याप्त है। लेखक का कहना है कि बाधाओं एवं विसंगतियों के बावजूद सूचना का अधिकार पारदर्शी एवं जवाबदेह प्रशासन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है जिसे जारी रखा जाना चाहिए।

विकास एक सतत प्रक्रिया है जो सदैव उच्च से उच्चतर एवं श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर की ओर अग्रसर रहती है। निस्संदेह इस प्रक्रिया का मुख्य लक्ष्य मानव जीवन का कल्याण तथा संसाधनों का सदुपयोग सुनिश्चित करना होता है। आर्थिक नियोजन के वर्तमान दौर में विकास के लक्ष्य, रणनीति तथा कार्यप्रणाली एक व्यवस्थित तंत्र से नियंत्रित होती है। इसी तंत्र का एक महत्वपूर्ण पक्ष है 'सूचना'। आधुनिक युग तथा विकास का मूलाधार बनी 'सूचना' को अधिकार के रूप में मांगने की प्रवृत्ति आज चारों ओर दिखाई दे रही है। यही कारण है कि देश भर में 'सूचना का अधिकार' एक सशक्त आंदोलन बन चुका है।

राजस्थान सरकार ने 26 जनवरी, 2001 को राज्य की जनता को सूचना का अधिकार प्रदान करके पारदर्शी एवं जवाबदेह प्रशासन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम रखा है। वस्तुतः आम आदमी को प्रशासनिक कार्यकलापों, सार्वजनिक व्यय, योजना-क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन के संबंध में जब तक नियंत्रणकारी शक्तियां प्राप्त नहीं होती तब तक विकास प्रशासन में जनसहभागिता तथा प्रशासनिक सच्चरित्रता की कल्पना बेमानी है। यद्यपि प्रशासनिक भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता तथा लालफीताशाही न्यूनाधिक मात्रा में विश्व के सभी देशों में व्याप्त है तथापि भारत सहित अधिकांश विकासशील देशों में निरक्षरता, अल्प जनजागरूकता तथा संकीर्ण सामाजिक-राजनीतिक दुरभिसन्धियों के चलते प्रशासनिक शिथिलता का स्तर कहीं अधिक है। जनसाधारण को दिया जाने वाला सूचना का अधिकार एक नए रूप में प्रशासन को विकसित करेगा, ऐसी आशा की जानी चाहिए। राजस्थान सूचना का अधिकार अधिनियम 2000 की धारा 2 में सूचना को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि सूचना का अर्थ राज्य या किसी लोक निकाय के कार्यकलापों से संबंधित किसी सामग्री या सूचना से है। सूचना के अधिकार से तात्पर्य है "राज्य या लोक निकायों के अभिलेखों की प्रमाणित प्रतिलिपियां प्राप्त कर राज्य एवं लोक निकायों के कार्यकलापों से संबंधित सूचना तक पहुंचना।" यह अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्राप्त है जो राज्य सरकार के किसी भी कार्यालय, इकाई या विभाग से सूचना पाना चाहता है। सूचना-प्राप्ति के इच्छुक व्यक्ति को संबंधित अधिकारी के समक्ष आवेदन करना होगा तथा निर्धारित शुल्क अदा करने पर उसे 30 दिन के अंदर सूचना की नकल या फोटोस्टेट प्रति उपलब्ध करा दी जाएगी।

सूचना का अधिकार न तो अबाध है और न होना चाहिए। इसी क्रम में 10 ऐसे मामले या परिस्थितियां

वर्णित की गई हैं जिनमें सूचना का अधिकार लागू नहीं होगा। ये हैं:

(1) विदेशी सरकारों, उनके अभिकरणों या अंतर्राष्ट्रीय संगठनों से प्राप्त ऐसी गुप्त सूचनाएं जिनको प्रकट करने से भारत की संप्रभुता एवं अखंडता, राज्य की सुरक्षा या अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के संचालन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका हो;

(2) केन्द्र एवं राज्य सरकार या उनके किन्हीं भी प्राधिकरणों या अभिकरणों के बीच गुप्त रूप से आदान-प्रदान की गई सूचनाओं सहित ऐसी सूचनाएं जिनको प्रकट करने से केन्द्र-राज्य संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका हो;

(3) मंत्रिमंडलीय दस्तावेजों, विशेषतया अंतर्विभागीय या अन्त:विभागीय टिप्पणियों, पत्राचार एवं परामर्श तथा निर्देश को अंतर्विष्ट करने वाले कागजातों के साथ ही आंतरिक नीति विश्लेषण से संबंधित प्रयोजनों और धारणाओं सहित ऐसी सूचनाएं जिनको प्रकट करने से आंतरिक विचार-विमर्श की सरलता को हानि पहुंचने की आशंका हो;

(4) ऐसी सूचनाएं जिनके प्रकटीकरण से विधि के प्रवर्तन, अपराधों के अन्वेषण, गिरफ्तारी इत्यादि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े या किसी व्यक्ति का जीवन या उसकी शारीरिक सुरक्षा खतरे में पड़े या किसी लंबित मामले के न्याय निर्णय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े या किसी व्यक्ति का विधिक अभिरक्षा से निकल भागना आसान हो जाए;

(5) ऐसी सूचना जिसे प्रकट करने से अर्थव्यवस्था या किसी लोक प्राधिकरण के विधिसम्मत आर्थिक एवं वाणिज्यिक हितों का प्रबंध करने की सरकार की योग्यता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े;

(6) ऐसी व्यक्तिगत सूचना जिसका प्रकटीकरण लोक क्रियाकलाप से संबंधित न हो या जिससे किसी व्यक्ति की एकान्तता में अनुचित हस्तक्षेप होता हो;

(7) ऐसी सूचना जिसके प्रकाशन से संसद या राज्य विधानमंडल के विशेषाधिकारों का हनन होता हो या किसी सक्षम न्यायालय के किसी आदेश का अतिक्रमण होता हो;

(8) ऐसी सूचना जो इस गारंटी के साथ दी गई हो कि उसे गुप्त रखा जाएगा;

(9) ऐसी सूचनाएं जो भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 123 एवं 124 के अंतर्गत दावाकृत विशेषाधिकारों में आती हों;

(10) ऐसी सूचनाएं जो किसी विशिष्ट समय पर प्रकाशित की जानी अपेक्षित हो या विक्रय के लिए प्रकाशित सामग्री से संबंधित हो।

व्यावहारिक बाधाएं

दरअसल सूचना के अधिकार की मांग तथा इससे संबद्ध मुद्दे इतने सरल नहीं हैं जितने कि प्रतीत होते हैं। सूचना का अधिकार व्यक्ति के 'अभिव्यक्ति के अधिकार' का ही उन्नत स्वरूप है। हमारे संविधान का अनुच्छेद 19(1) प्रत्येक नागरिक को अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता देता है किन्तु अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक सूचना की पूर्ति की गारंटी नहीं देता। सन 1985 में सर्वोच्च न्यायालय (इंडियन एक्सप्रेस न्यूज पेपर्स बनाम भारत संघ) ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को स्पष्ट करते हुए कहा था—''यह व्यक्ति की आत्म-उन्नति में सहायक है, सत्य की खोज में सहायक है, निर्णय क्षमता को सुदृढ़ बनाती है तथा स्थिरता एवं सामाजिक परिवर्तन में यथोचित सामंजस्य स्थापित करने में सहायक सिद्ध होती है।'' इसी प्रकार के संदर्भ राज्यों के उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय के कुछ अन्य मुकदमों से संबंधित हैं जिनमें सूचना का अधिकार आम जन को दिए जाने को बल दिया गया है।

सूचना के अधिकार की राह में दो कानून मुख्य रूप से बाधा डालते हैं। सन 1923 का ''शासकीय गुप्त बात अधिनियम'' यह प्रावधान करता है कि—''देश की एकता, अखंडता, सुरक्षा तथा व्यवस्था को सुनिश्चित करने के लिए सरकारी फाइलें गोपनीय बनी रहेंगी।'' इसी प्रकार भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अंतर्गत यह अधिकार है कि प्रशासनिक सूचनाएं आम जनता के मध्य उजागर न की जाए।'' इसी कानून की धारा 124 यह प्रावधान करती है कि ''किसी भी सरकारी अधिकारी को प्रशासनिक सूचनाएं देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता हैं।'' चूंकि देश

भर में अभी भी शासकीय गुप्त बात अधिनियम तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम प्रभावी हैं अत: इन कानूनों की आड़ में नौकरशाही सूचनाएं देने तथा पारदर्शिता बरतने से गुरेज करती है।

संभवत: राजनेताओं, ठेकेदारों तथा वरिष्ठ नौकरशाहों को यह आशंका बनी हुई है कि सूचना का अधिकार देने से समाज में उनकी छवि विपरीत रूप से प्रभावित होगी तथा परम्परागत सत्ता-सुख एवं अहं को ठेस लगेगी। वास्तविकता यह है कि आम जनता को यह सब तो पहले से ही पता है। सूचना के अधिकार के बाद हानियां कम तथा लाभ अधिक होने के आसार हैं क्योंकि आम जन के पसीने की कमाई से संचालित होने वाली विकास योजनाओं में दिखाई देने वाला भ्रष्टाचार नियंत्रित हो सकेगा। सामाजिक-स्तर पर अंकेक्षण की शुरुआत होने से एक नए प्रकार का नियंत्रण स्थापित होगा जो अभी तक अप्रचलित है। दरअसल निरक्षर, रूढ़िवादी, बहुसांस्कृतिक, निर्धन तथा उपनिवेशवादी समाजों में जवाबदेयता का अभाव पाया जाता है। भारतीय प्रशासनिक तंत्र में बरसों से लोक सेवकों में स्वयं को जनता का सेवक मानने के बजाए जनता का स्वामी बनने का अहसास व्याप्त है जो प्रशासन तथा जनता के मध्य अंतत: दूरियां बढ़ाता ही है।

आशाप्रद भविष्य

स्वयंसेवी संस्थाओं, जनसंचार माध्यमों तथा जन साधारण के दबाव को देखते हुए भारत में अब सरकारी-तंत्र कुशल, पारदर्शी, संवेदनशील तथा जवाबदेह बनने की दिशा में प्रयासरस है। केन्द्रीय सरकार के लगभग सभी मंत्रालयों तथा अधिकांश राज्य सरकार विभागों द्वारा जारी ''नागरिक अधिकार पत्र'' (सिटीजंस चार्टर) इसी दिशा में एक कदम है किन्तु सूचना का अधिकार एक व्यापक, गंभीर तथा महत्वपूर्ण अवधारणा है। नागरिक अधिकार, कार्य के होने से पूर्व उपभोक्ता को उसके अधिकार बताता है तो सूचना का अधिकार विभाग द्वारा किए गए कार्य या निर्णय का पोस्टमार्टम है।

सन 1997 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्द्रकुमार गुजराल की अध्यक्षता में 'प्रभावी एवं उत्तरदायी प्रशासन' विषय पर आयोजित मुख्यमंत्री सम्मेलन में यह मांग उठी थी कि विकास कार्यों पर निगरानी रखते हुए आम जनता को सूचना का अधिकार दिया जाए। इससे पूर्व केन्द्र सरकार स्वयंसेवी संस्था 'कॉमन कॉज' के अध्यक्ष एच.डी. शौरी तथा सोली सोराबजी, एस. नरेन्द्र, ए. सिन्हा, आर.एन. वर्मा, एस.पी. ओझा, अशोक कुमार, एस.पी. जोशी, एन.एस. माधवन तथा हरिन्द्र सिंह की सदस्यता में एक कार्यदल गठित कर चुकी थी। कार्यदल ने कनाडा, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, इंग्लैंड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के सूचना के अधिकार कानूनों का अध्ययन कर मई, 1997 में अपनी रिपोर्ट (रिपोर्ट आन राइट टु इन्फॉरमेशन एंड प्रमोशन आफ ओपन एंड ट्रांसपेरेन्ट गवर्नमेंट) सौंप दी थी। इसी कार्यदल की अनुशंसा पर केन्द्र सरकार ने सूचना का अधिकार विधेयक निर्मित किया। राजस्थान, कर्नाटक, महाराष्ट्र तथा मध्य प्रदेश सहित बहुत-सी राज्य सरकारें सूचना का अधिकार संबंधी कानून बना चुकी हैं किंतु कुछ मूलभूत प्रश्न आज भी अनुत्तरित हैं। प्रथम तो यह कि चाही गई सूचना कई बार 'तत्काल' महत्व की होती है। अत: ऐसे में प्रशासनिक अधिकारी को 30 दिन का समय देना न्यायोचित प्रतीत नहीं होता। दूसरी समस्या यह है कि बहुत सारे विषय या परिस्थितियां ऐसी बताई गई हैं जिनमें सरकार चाहे तो प्रार्थी को कोई सूचना उपलब्ध न करवाए। इन प्रतिबंधात्मक प्रावधानों की आड़ में सरकारी तंत्र भ्रष्टाचार को जारी रख सकता है। लेकिन समस्त विसंगतियों या बाधाओं के उपरांत भी कहा जा सकता है कि सूचना का अधिकार आम जनता में जागरूकता लाने तथा प्रशासन में कार्यकुशलता बढ़ाने का एक कारगर माध्यम सिद्ध होगा। इस संदर्भ में बहुत-सी व्यावहारिक समस्याओं का पता भविष्य में ही चल पाएगा। इसीलिए न्यायमूर्ति पी.बी. सावंत का कहना है कि ''अगर सूचना के अधिकार के साथ-साथ अन्य संस्थाओं जैसे जनसंचार माध्यमों, गैर-सरकारी संगठनों तथा लोकपाल एवं लोकायुक्त को सक्षम नहीं बनाया गया तो यह अधिकार निरर्थक सिद्ध होगा।'' ❑

(लेखक श्रीकल्याण राजकीय कालेज, सीकर, राजस्थान में लोक प्रशासन के व्याख्याता हैं।)

महिलाओं का बढ़ता वर्चस्व

रमेश चन्द्र पारीक

नर-नारी सृष्टि की एक अनुपम रचना है और दोनों के संयुक्त योगदान से ही समाज और संसार में शांति एवं स्थायित्व संभव है। यही कारण है कि पुरुष-प्रधान समाज ने नारी के उत्थान एवं सशक्तिकरण की वर्तमान आवश्यकता को अंगीकार करते हुए उसे अनेक सुविधाएं प्रदान की हैं जिनके बल पर नारी का समाज में वर्चस्व निरंतर बढ़ रहा है। प्रस्तुत लेख में नारी की प्राचीन एवं वर्तमान उपलब्धियों का रोचक विवरण है।

सृष्टि की अनुपम रचना है नर-नारी। महिला और पुरुष दोनों का अस्तित्व संसार में कायम है। एक के बिना दूसरा अधूरा है। वास्तव में प्राकृतिक दृष्टिकोण से दोनों को एक-दूसरे की चाहत व जरूरत है। दोनों संसार के नियामक हैं, पीढ़ी-दर-पीढ़ी के संवाहक, सशक्त व जीवंत माध्यम हैं। समाज में दोनों की स्थिति व परिस्थिति सम्माननीय है। दोनों परिवार की बुनियाद हैं, संस्कृति व सभ्यता की पहचान। दोनों के अंत:करण में ऐक्य भाव जाग्रत रहता है। प्रेम, सम्मान व बलिहार का भाव रहता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पुरुष के मुकाबले महिलाओं का वर्चस्व सतत बढ़ रहा है। सकारात्मक सोच तथा अगाध विश्वास के साथ विकासोन्मुख प्रयास जारी हैं।

प्राचीनकाल की ओर मुड़कर देखें तो पाएंगे कि नारी सदैव पूजनीय रही है—''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।'' आज महिलाओं का काम चूल्हे-चौकी, बर्तन, झाड़ू या पानी लाने तक ही सीमित नहीं रह गया है। घर की चारदीवारी में कैद रहकर जीवनयापन करने की मजबूरी उसकी नहीं है। आज उसे आवश्यकता है निरक्षरता से लड़ साक्षर बनने की, लोकाचारों व परंपराओं को तोड़ने की, शोषण के खिलाफ आवाज उठाने की, अत्याचार के विरुद्ध हौसले बुलंद रखने की तथा आबादी की बाढ़ पर अंकुश लगाने की। आज साक्षर नारी समाज में अपना स्थान बना रही है, वर्चस्व बढ़ा रही है किंतु निरक्षर महिला घूंघट की ओट में सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति बन सब कुछ सहन कर रही है, पर्दानशीं होकर, मूक रहकर पीछे हट रही है, बराबरी की भागीदारिता से मुकर रही है।

सृष्टि के रचयिता परमपिता ब्रह्माजी ने महिलाओं को वर्चस्व प्रदान करने के उपादान दिए—पुरुष-महिलाओं में भेद रखा, नारी को ऐश्वर्य व वैभव लुटाया, रूप-हुस्न का जलवा दिया, कौमार्य एवं स्वभाव-माधुर्य दिया। हमारे देवगण भी देवियों की उपासना करते हैं, साधक बनकर मनोरथ पूर्ण करते हैं। मां वैष्णवी ने भैरव दैत्य का वध किया। राम-रावण युद्ध के दौरान श्रीराम ने आदिशक्ति भवानी की अराधना की, युद्ध में भवानी की कृपा के बिना कोई योद्धा विजयी नहीं बन सका। धन की देवी लक्ष्मी और विद्या की देवी सरस्वती की सभी उपासना करते हैं, अर्चना-वंदना करते हैं। सती सावित्री, पतिव्रता अनुसुइया की कोई बराबरी नहीं कर पाया क्योंकि महिला में 'सत्यं शिवं सुंदरम्' का समभाव होता है। वह ज्ञान, भक्ति, शौर्य की त्रिवेणी होती है। वह मां, पत्नी, बालिका के रूप में सदैव पुरुष के इर्द-गिर्द रहकर उसका परिरक्षण करती है, उसे मार्गदर्शन व सहयोग देती है। महिला परिवार की धुरी है, पुरुष के मुखरित व्यक्तित्व की सुघड़ कड़ी

है। महिलाओं ने इस संसार में युद्ध करवाए तो दोस्ती भी बढ़ाई। सामाजिक सरोकारों की पूर्ति की तो पारिवारिक जरूरतों को भी समझा। प्यार से परिवार बसाया तो आक्रोश में तलवार भी उठाई।

हमारा समाज पुरुष-प्रधान है। इसलिए वह महिला को या तो देवी बनाकर पूजता है या दासी बनाकर रखता है किंतु उसे बराबरी का दर्जा देने में हिचकता है, कभी समता का पलड़ा बराबर आता ही नहीं। या तो महिला सुखी है, एशो-आराम की धनी है या घर के कामों के चक्रव्यूह में फंसी हुई है, दुखी है। बराबर तो कुछ पलों के निमित्त रहती है। प्राचीन काल में हमारे शिक्षा केन्द्रों—नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला, नवदीप में कितनी महिलाओं ने ज्ञानार्जन का अवसर पाया। शायद गिनती शुरू ही नहीं होगी। ऋषि आश्रमों में कभी-कभार आखर धाम पनपे। उस काल में गार्गी और मैत्रेयी जैसी महाविदुषी मातृ शक्तियां हुई जिन्होंने साक्षरता के क्षेत्र में कीर्तिमान बनाए, ख्याति अर्जित की।

हमारा देश गांवों का देश है, कृषि प्रधान देश है, यहां की आत्मा गांवों में बसती है क्योंकि आज भी देश की एक अरब आबादी में से सत्तर करोड़ लोग गांवों में बसते हैं। वहां भी परिवर्तन का दौर आया है। धीरे-धीरे बदलाव आ रहा है रहन-सहन में, उठने-बैठने में, वाद-संवाद में, सकारात्मक सोच में, अंधविश्वासों को उखाड़ फेंकने में, काम-काज के तरीकों में, निरक्षरता को पछाड़ कर साक्षर बनने की चाहत में। सरस्वती पाठशाला, आंगनवाड़ी, सहज शिक्षा केन्द्र, प्रौढ़ शिक्षण केन्द्र, लोक जुंबिश अनौपचारिक केन्द्र, राजीव गांधी स्वर्ण जयंती पाठशाला इत्यादि से जुड़ने में दिलचस्पी एवं लगाव नजर आ रहा है। एक सुखद पहल दिखाई दे रही है जनचेतना की। गांवों में भी महिलाओं का आरक्षण (राजनीति) होने से राजनीति के क्षेत्र में उनकी भागीदारी बढ़ी है। आज अनेक महिलाएं वार्ड पंच, सरपंच, पार्षद, जिला प्रमुख, एम.एल.ए., एम.पी. हैं। सरकार की जनता के हाथों में सत्ता की सुपुर्दगी से लाभान्वित हो रही हैं। महिला नीति के तहत ग्राम सभाओं के साथ-साथ महिला ग्राम सभाओं के भी आयोजन किए जा रहे हैं ताकि गांव में प्राकृतिक संसाधनों, पर्यावरण एवं अन्य प्रबंधन में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो सके। महिलाओं की सत्ता में भागीदारी बढ़ाने के उद्देश्य से आरक्षण कोटा (नौकरी में तथा चुनाव में) बढ़ा दिया गया है। कार्यरत महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा अधिक सुविधाएं, आयकर में सीधे पांच हजार रुपये की विशेष छूट, प्रसवकालीन अवकाश में वृद्धि, कार्यरत महिला छात्रावासों का निर्माण, तबादला नीति में शिथिलता, महिला कोटा की पूर्ति इत्यादि सुविधाएं प्रदान की गई है। ऐसा करने से महिलाओं का घर-परिवार में महत्व बढ़ा है समाज में उनका वर्चस्व बढ़ा है, सेवाओं के प्रति आकर्षण व दबदबा बढ़ा है। आज महिलाएं पुरुषों से आगे निकल रही हैं—शासन, अनुशासन, प्रशासन, प्रबंधन, समायोजन तथा नियोजन सभी क्षेत्रों में।

आज की महिलाएं जागरूक हैं, सचेत हैं। गांवों में भी साक्षरता के प्रति होड़ मची है। राजनीति ने, फिल्म जगत ने उन्हें भी प्रभावित किया है। वास्तव में आज हर जगह महिलाओं का पूर्ण वर्चस्व है। यह प्रभुत्व सकारात्मक है।

आजादी से पूर्व मुगलकाल, सल्तनत काल पर दृष्टि डाले तो हम देखेंगे कि रजिया सुल्तान ने देश की बागडोर संभाली। नूरजहां ने अपने असीम सौंदर्य से बादशाह जहांगीर को मोहित किया, शासन चलाया वहीं मुमताज महल ने अपने प्रेम की अनुपम सौगात 'ताजमहल' का शाहजहां से निर्माण करवाया। माता कैकेयी ने राजा दशरथ से दो वांछित वर मांग कर श्रीराम को चौदह वर्ष के लिए वनवास भिजवाया। नारी की महत्ता हर युग और काल में रही है। भक्ति रस की अनन्य साधिका मीराबाई ने अपनी अलग पहचान बनाई, भक्त और भगवान की साकार ज्योति जलाई। माता जीजाबाई ने तत्कालीन परिस्थितियों में जूझकर, अपने विवेक व कौशल से छत्रपति शिवाजी को महान बनाया। देश प्रेम व स्वाभिमान से दैदीप्यमान बनाया; शौर्य, वीरता व बुद्धि कौशल में निपुण बनाया। ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण किया जिसने देश को नई दिशा प्रदान की। शौर्यमयी और तेजस्विनी झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने फिरंगियों की साम्राज्यवादी नीति का जमकर विरोध किया और जंग करते हुए आजादी की खातिर वीरांगना लक्ष्मीबाई ने अपनी कुर्बानी दे दी, वे

वीरगति को प्राप्त हुई। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 में एक ओर नूरानी महिला अवध की बेगम हजरत महल ने क्रांतिकारी बाना पहनकर युद्ध में भाग लिया इसी प्रकार नागालैंड की रानी गदनलिओ ने भी आजादी की जंग में शौर्य का प्रदर्शन किया। महाराज दुष्यंत की रानी शकुंतला ने विकट परिस्थितियों से जूझते हुए बालक भरत का ऐसा सर्वांगीण विकास किया कि वह बड़ा होकर सम्राट भरत बना और उसके नाम पर हमारे देश का नाम 'भारत' पड़ा। चित्तौड़ की महारानी अनुपम सौंदर्य की एकल स्वामिनी पद्मिनी ने जौहर से इहलीला समाप्त कर वीरांगना की भूमिका निभाई किंतु अलाउद्दीन खिलजी की घृणित आकांक्षाओं को साकार नहीं होने दिया। पन्नाधाम के महान त्याग व बलिदान से आज भी रोंगटे खड़े हो उठते हैं और उनके स्वाभिमानी चरित्र से आंखें डबडबा जाती हैं। चांदबीबी के शौर्य की गाथाएं उत्साह भरती हैं। महिलाओं ने जीवन के प्रत्येक पायदान पर वर्चस्व बनाया है। उर्वशी, मेनका जैसी अप्सराओं ने चारू रूप-लावण्य पाकर ऋषि-देवगणों को मोहित किया है। कहीं साध्वी बनकर ज्ञानगंगा प्रवाहित की है तो कहीं साधक भक्त बनकर भगवान को प्रसन्न किया है। वह 'सत्यं शिवं सुंदरम्' की साक्षरता त्रिवेणी साबित हुई है। सतीत्व व मर्यादा का प्रमाण दिया है तो सीता की तरह अग्नि-परीक्षा भी दी है। पतिव्रत धर्म निभाया है, संस्कृति को समृद्ध बनाया है, हरेक क्षेत्र में श्रेष्ठता का परचम लहराया है।

आजादी के पश्चात महिलाओं में नवचेतना आई है। जीवन की प्रत्येक गतिविधि व क्रियाकलाप में महिलाएं आगे आई हैं। चिकित्सा या सुरक्षा हो, घर प्रबंधन या व्यवसाय हो, दफ्तर या परिवार हो, विज्ञापन या कारोबार हो, प्रतिस्पर्धा या मॉडलिंग हो, रूप हाट या प्रतियोगिता हो, नीति या राजनीति हो, फिल्म या साहित्य हो, कला या संस्कृति हो, धर्म या आस्था के दीप हों, हर जगह वजूद रखती हैं। आजादी हेतु स्वतंत्रता की क्रांति हो, दुग्ध व पशुपालन की श्वेत क्रांति हो, खेती व कृषि उन्नयन की हरित क्रांति हो, युद्ध का उद्घोष हो या शांति के सुनहरे दिनमान-आज की महिला का प्रत्येक क्षेत्र में अद्वितीय योगदान है। स्वाधीनता के पश्चात विजय लक्ष्मी पंडित, सरोजनी नायडू, मदर टेरेसा, इंदिरा गांधी इत्यादि महिलाओं ने अपने व्यक्तित्व व कृतित्व से देश का मान बढ़ाया। मदर टेरेसा ने दूसरों के जीवन को सुंदर बनाने में अपना संपूर्ण जीवन लगा दिया। विजय लक्ष्मी पंडित ने संयुक्त राष्ट्र संघ के महत्वपूर्ण अंग 'महासभा' में अध्यक्ष पद सुशोभित कर भारत का गौरव बढ़ाया। राजनीति के क्षेत्र में इंदिरा गांधी की कूटनीति व दूरदर्शिता की कोई सानी नहीं रही।

जीवन के प्रत्येक घटनाक्रम में महिलाओं का वर्चस्व व्याप्त है। महिलाएं प्रत्येक राजनीतिक दल में प्रभावी नेत्रियां हैं। सक्रिय राजनीति में ममता बैनर्जी, सोनिया गांधी, सुषमा स्वराज, शीला दीक्षित, राबड़ी देवी, रामाबेन, जयललिता, जया जेटली, गिरिजा व्यास, मोहिनी गिरि, नजमा हेपतुल्ला इत्यादि अग्रणी हैं। आई.पी.एस. अधिकारी किरण बेदी की सदाश्यता, गायन क्षेत्र की अद्वितीय प्रतिभा स्वरकोकिला लता मंगेशकर, अभिनेत्री शबाना आजमी, हेमामालिनी, धाविका पी.टी. उषा, ओलम्पिक एथलीट के. मल्लेश्वरी, उड़नपरी कल्पना चावला, पर्वतारोही बच्छेन्द्रीपाल, साध्वी उमा भारती, संपादक पत्रकार मृणाल पांडे इत्यादि महिलाओं ने नई पहचान बनाई है। इनकी प्रतिभा, क्षमता, योग्यता पर सभी नतमस्तक हैं। जिस प्रकार राजनीति में नेत्रियों की पकड़ है उसी प्रकार फिल्म जगत में अभिनेत्रियों की भरमार है। साहित्य सृजन में सभी विधाओं में वे प्रतिष्ठापित हैं। सौंदर्य प्रतियोगिताओं में विश्व स्तर पर अग्रिम पंक्ति में हैं। विश्व सुंदरी (मिस वर्ल्ड) का खिताब अर्जित करने वाली भारतीय सुंदरियों में जहां रीता फारिया (1966), ऐश्वर्य राय (1994), डायना हैडन (1997), युक्ता मुखी (1999), प्रियंका चोपड़ा (2000) हैं वहीं ब्रह्मांड सुंदरी (मिस यूनिवर्स) का ताज सुश्मिता सेन (1994), लारा दत्ता (2000), ने पहना है और देश को गौरव व सम्मान दिलवाया है।

आज की महिलाएं जागरुक हैं, सचेत हैं। गांवों में भी साक्षरता के प्रति होड़ मची है। राजनीति ने, फिल्म जगत ने उन्हें भी प्रभावित किया है। वास्तव में आज हर जगह महिलाओं का पूर्ण वर्चस्व है। दफ्तर में, घर-परिवार में, जीवन के प्रत्येक क्रियाकलाप में। यह प्रभुत्व सकारात्मक है। आज की नारी कल के भविष्य की अधिकारी है, आज की महतारी है, विकास की धुरी है। ❑

(लेखक अध्यापन कार्य से जुड़े एक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ग्रामीण बेरोजगार नए विकल्प

आई.सी. श्रीवास्तव

आज सूचना-तंत्र के प्रयास से गांवों में रोजगार की विपुल संभावनाएं प्रकट हो रही हैं। प्रशासन ग्रामीणों के द्वार तक पहुंच चुका है और थू-अभिलेख, रजिस्ट्रेशन दस्तावेज, दिन-प्रति-दिन के बाजार भाव आदि बड़ी संख्या में पी.सी. अर्थात पर्सनल कंप्यूटर के माध्यम से उन्हें प्राप्त होने लगे हैं। अर्थव्यवस्था के तीसरे सैक्टर-सेवा सैक्टर में रोजगार की संभावनाएं बढ़ाकर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि उत्पादन पर निर्भरता कम की जा सकती है एवं परस्पर सहायता के नए आयाम विकसित कर ग्रामीण विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है, ऐसी लेखक की मान्यता है।

हमारे कृषिप्रधान देश में वर्षों तक स्कूलों में यह पढ़ाया जाता रहा कि 80 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और खेती पर निर्भर करते हैं। अब चूंकि 70 प्रतिशत लोग ही ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी हैं तो क्या हम इतनी ही आबादी को कृषि कार्यों से जीवन-यापन के साधन जुटाने वाला मान सकते हैं? योजना आयोग और अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रकाशित आंकड़ों से इसके विपरीत जानकारी मिलती है जिसके अनुसार अर्थव्यवस्था के तृतीय सेक्टर यानी विभिन्न सेवाओं में 50 प्रतिशत से अधिक संख्या में लोग रोजगार पा रहे हैं, प्राथमिक सेक्टर यानी कृषि एवं सहायक कार्यों में 30 प्रतिशत, और उत्पादक द्वितीय सेक्टर में केवल 15 से 20 प्रतिशत लोग कार्यरत हैं। इसका अर्थ है कि देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए पर्याप्त 208 मिलियन टन (वर्ष 2000-2001) वार्षिक खाद्य उत्पादन में मात्र 30 प्रतिशत जनसंख्या सक्षम है। शेष लोग जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं वे बेरोजगार हैं या पूर्णकालिक कार्य में नहीं लगे हैं, अथवा निर्माण एवं सेवा सेक्टर से जुड़कर रोजगार पा रहे हैं, या रोजी-रोटी का अपना जुगाड़ करने से स्वरोजगारों की श्रेणी में गिने जा सकते हैं। नि:संदेह कृषि को छोड़कर रोजी-रोटी के सीमित संसाधन ही ग्रामीण लोग अपने लिए खोज सके या जुटा सके हैं।

दूसरी ओर, ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना-तंत्र के प्रसार की विपुल संभावनाएं प्रकट हो रही हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना क्रांति की प्रतीक दूरदर्शन एवं एस.टी.डी./अन्य टेलीफोन सेवाएं, सूचना प्रसार और जनजागरण का माध्यम बन गई हैं और अब वहां कंप्यूटर के प्रवेश की बारी है। केरल, तमिलनाडु जैसे प्रदेशों में विशाल पैमाने पर कंप्यूटर ने ग्रामीण क्षेत्रों में न केवल दस्तक दे दी है वरन प्रशासन से जुड़ी सेवाओं और ग्रामीण क्षेत्र की अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति का सूत्रपात कर चुका है। प्रशासन ग्रामीणों के द्वार तक पहुंच चुका है क्योंकि भू-अभिलेख, रजिस्ट्रेशन दस्तावेज, दिन-प्रति-दिन के बाजार मूल्य और अन्य समाचार बड़ी संख्या में वहां पी.सी. के माध्यम से प्राप्त हो रहे हैं। केरल के मछुआरे सेलफोन (मोबाईल) से मछली मारने के बाद आस-पास के बाजारों में तुलनात्मक बाजार दरें ज्ञात कर लाभप्रद मंडियों में मछलियां ले जाने लगे हैं। इस प्रकार अनेक प्रदेशों में सूचना क्रांति ने अर्थव्यवस्था के तृतीय सेक्टर-सेवा सेक्टर में रोजगार की असीमित संभावनाएं उत्पन्न कर दी हैं।

बहुल जनसंख्या वाले 'बीमारू' यथा चार पिछड़े प्रदेश—बिहार, मध्य-

प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश अभी अपनी 'बीमारू' स्थिति से नहीं उबर सके हैं। बिहार और उत्तर प्रदेश में जातीय राजनीति और बेतहाशा बढ़ती जनसंख्या की अपनी समस्याएं हैं। यद्यपि आक्रामक जातीय राजनीति राजस्थान और मध्य प्रदेश में भी पांव पसार रही है किंतु मध्य प्रदेश वर्तमान में छत्तीसगढ़ प्रदेश के निर्माण से उत्पन्न समस्याओं और राजस्थान लगातार तीसरे वर्ष अकाल के स्थाई समाधान और रोजगार की समस्या का हल निकालने में लगे हैं। प्रकृतिदत्त अकाल-जनित समस्याओं में पृथ्वी से अंधाधुंध जलदोहन कर हम जलग्रहण समस्याओं को और भयावह बना रहे हैं। राजनीतिक इच्छा-शक्ति के अभाव को कोसते हुए या विभिन्न राजनीतिक दलों में सहमति न होने की त्रासदी को उजागर कर बुद्धिजीवी बेरोजगारी दूर करने के अर्थशास्त्री विकल्प सुझाते रहते हैं। सम्मेलनों, कार्यशालाओं और गोष्ठियों का कभी भी अकाल नहीं रहा क्योंकि उनमें राजनीतिज्ञों को भाषण देकर स्वयं को प्रचारित-प्रसारित करने का अवसर और समाजशास्त्रियों को अपने सैद्धांतिक या अनुसंधानजनित विचारों के लिए उपयुक्त मंच मिलता रहता है। हमारी अर्थव्यवस्था वैश्वीकरण और बाजार प्रणाली के दबावों को झेलती, सूचना और प्रौद्योगिकी क्रांति की सहायता से अपने ही दम-खम पर अग्रसर हो रही है। ग्रामीण लोग प्रगति से सर्वथा बाईपास नहीं हो रहे हैं क्योंकि जिस प्रकार लोग सड़क के बाईपास पर भी अपनी 'रिबन' (फीतानामा) भौतिक संरचना यथा दुकानें और सुविधास्थल विकसित कर लेते हैं, उस प्रकार सरकारी उपेक्षाओं और बुद्धिजीवियों द्वारा नजरअंदाज किए जाने के बावजूद ग्रामीण अपने लिए सेवार्थ-जनित रोजगार संसाधन जुटाने में सफल हो जाते हैं।

गांवों में भाई-चारा और परस्पर विश्वास की बेल पुनः लगानी होगी। गांवों के लोग अपने ही ग्राम के युवाओं पर विश्वास नहीं करेंगे तो फिर इसी तरह कोर्ट-कचहरियों में वकीलों और सरकारी कारकूनों के हाथों लुटते रहेंगे और जीवनपर्यंत मुकदमे लड़ने के लिए बाध्य होंगे। इतिहास साक्षी है कि जो जाति, वर्ग स्वयं की सहायता करते हैं, उनकी ही ईश्वर मदद करता है। स्वयंसेवी संगठन ग्रामीण सशक्तिकरण के सशक्त माध्यम बन सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में किन-किन संभावनाओं के बीज अंकुरित हो रहे हैं और किस प्रकार की सेवाओं के बीजारोपण की आवश्यकता है? बुनियादी संरचना के जीवन-तंत्र राष्ट्रीय राजमार्गों के दोनों ओर ग्रामों के किनारे या निकट न केवल अनेक प्रकार के सेवास्थल यथा ढाबे, ट्रक, मोटर-ट्रैक्टर मरम्मत वर्कशाप्स, मोटर स्पेयर पार्ट्स, दवाई, परचून और खानपान की दुकानें, और एस.टी.डी./आई.एस.डी. सेवाएं पनप रही हैं बल्कि इनसे विशाल जनसंख्या को रोजगार के साधन भी मुहैया हो रहे हैं। राष्ट्रीय, प्रादेशिक राजमार्गों से हट कर जिला और संपर्क सड़कों पर भी बस स्टैंड, आबादी और सरकारी कार्यालयों के इर्द-गिर्द इसी प्रकार के सेवास्थल अर्द्ध-विकसित देखे जा सकते हैं। पूरे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में शहरीकरण के प्रयास के ऐसे जीवंत नमूने दृष्टिगत होते हैं।

राष्ट्रीय, प्रदेशीय मार्गों पर शहरीकरण की उपरोक्त प्रक्रिया और प्रगति के साथ-साथ अन्य सेवाओं को विकसित करने की बात पर विचार की आवश्यकता प्रतीत होती है। ग्रामीण परिदृश्य में महिलाओं के बचत-समूहों (जिसने आंध्र प्रदेश की सरपंच फातिमा बीबी को यूनेस्को अवार्ड दिलाया) का सेवाओं के विस्तार में अग्रणी स्थान माना जा सकता है। लगभग 6000 महिला समूहों के निर्माण से अजमेर जिला देश में जिला-स्तर पर सर्वाधिक लक्ष्य प्राप्त कर प्रथम स्थान पर आ गया है। इससे पूर्व हरित क्रांति के बाद, दुग्ध सहकारी समितियों एवं दुग्ध संग्रह केंद्रों ने श्वेत क्रांति के युग का सूत्रपात कर सेवा क्षेत्र के विस्तार में पर्याप्त सहायता की थी। राजस्थान भी इस क्रांति में पूर्णतया शामिल है। इसके अतिरिक्त हैंडपंप, कुएं के इंजन-पंपों की मरम्मत, डीजल, उपकरण, बिजली की मरम्मत के लिए तकनीकी सेवाओं और मानव या पशु-

चिकित्सा सेवाओं के विस्तार ने भी ग्रामीण क्षेत्र में अच्छी पैठ कर ली है।

कृषि उत्पादन पर निर्भरता कम करने की दिशा में ग्रामीणों को स्वयं की आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु रोजगार एवं सेवाओं के नए द्वार खोलने होंगे। इस प्रक्रिया में नेहरू युवा केंद्रों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों से संचालित या ग्रामों में क्रियाशील स्वयंसेवी या स्वैच्छिक संस्थाओं/सोसायटीज की सहायता लेनी होगी। ग्रामीण क्षेत्रों की रोजमर्रा की निम्न सेवा जरूरतों को उसमें शामिल किया जा सकता है:

1. विभिन्न कोर्ट कचहरी में पेंडिंग मुकदमों में पैरवी हेतु वकीलों से संपर्क;
2. राजकीय/प्रशासकीय कार्यालयों में अनुदान, ऋण, हथियार, दुकान, पदार्थ, लाईसेंस के लिए दौड़-भाग व पैरवी;
3. शहरों से जरूरी/गैर-जरूरी सामान की आपूर्ति तथा कपड़े, साबुन, फल-सब्जी, खान-पान व निर्माण-सामग्री, सिंचाई के संसाधन आदि शहर से खरीद कर लाना।
4. बैंक, अस्पताल आदि संस्थानों की सेवाएं उपलब्ध कराना;
5. अन्य आवश्यक/अक्सर काम आने वाली सामग्री/सेवा की आपूर्ति।

ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षा प्राप्त अनेक युवक बेरोजगार घर बैठे रहते हैं और उनके माता-पिता उनसे खेती का काम नहीं ले पाते। यह सर्वविदित तथ्य है कि अधिकांश खेती ट्रैक्टर की सहायता से अथवा अधबटाई के आधार पर होती है जिसमें कम संख्या में कामगारों की जरूरत है। बेरोजगार युवक इस प्रकार ग्रामीण समाज पर बोझ बने रहते हैं अत: क्यों न उन्हें उपरोक्त सेवाओं एवं जरूरतों की आपूर्ति हेतु प्रभावी प्रशिक्षण दिया जाए? यदि ग्रामीणजन पंचायत के माध्यम से अथवा स्व-प्रेरणा से आत्मनिर्भर सहायता समूहों का निर्माण करें और स्वैच्छिक संस्था (जो उस क्षेत्र में सक्रिय हो) इस कार्य में ग्रामीणों की न केवल सहायता करे वरन युवकों को विभिन्न सेवाओं के लिए प्रशिक्षण देकर कार्य-सामग्री एवं उपकरण उपलब्ध कराए तो सेवाओं का विभिन्न क्षेत्रों में विस्तार हो सकेगा। उदाहरण के लिए कोर्ट-कचहरियों में वकीलों से संपर्क हेतु भी उन्हें प्रशिक्षित किया जा सकता है। एक ही ग्राम के लोगों में विभिन्न कारणों से आपसी वैमनस्य उत्पन्न हो जाता है। यदि ग्रामीण परस्पर मुकदमों के कारण एक से अधिक समूह बनाना जरूरी समझें तो अपने विश्वसनीय भाई-भतीजों, रिश्तेदार नवयुवकों के मुकदमों की सूची और कागजात संभाल सकते हैं। स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा प्रशिक्षण दिए जाने के उपरांत मुकदमेबाजी में फंसे लोगों के बड़ी संख्या में शहर जाने के बजाय दो-चार युवक ही शहर या जिला मुख्यालय जाकर वकीलों से संपर्क कर सकते हैं और अधिकृत प्रतिनिधियों के रूप में कचहरियों में अपनी उपस्थिति दर्ज करा सकते हैं। इससे ग्रामीणजन के धन और समय दोनों की बचत होगी। अविश्वास अंग्रेजों की देन है, भारतीय संस्कृति की विरासत नहीं। गांवों में भाई-चारा और परस्पर विश्वास की बेल पुन: लगानी होगी। गांवों के लोग अपने ही ग्राम के युवाओं पर विश्वास नहीं करेंगे तो फिर इसी तरह कोर्ट-कचहरियों में वकीलों और सरकारी कारकूनों के हाथों लुटते रहेंगे और जीवनपर्यंत मुकदमे लड़ने के लिए बाध्य होंगे। इतिहास साक्षी है कि जो जाति, वर्ग स्वयं की सहायता करते हैं, उनकी ही ईश्वर मदद करता है। स्वयंसेवी संगठन ग्रामीण सशक्तिकरण के सशक्त माध्यम बन सकते हैं। आवश्यकता है प्रतिष्ठित और लोकप्रिय स्वयंसेवी संगठनों द्वारा पहल किए जाने की।

ग्रामीण क्षेत्रों में परस्पर सहायता कार्य को भारतीय परंपरा के अनुरूप एक परोपकारी या पवित्र कार्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। अपने ही ग्राम के बंधु-बांधवों या अन्य जाति/वर्ग के लोगों की सेवा आवश्यकताओं की आपूर्ति करना एवं सामाजिक सरोकारों से संबंध स्थापित करना मानवीय गुणों को विकसित करने में सहायक होगा।

ग्रामीण क्षेत्र से बड़ी संख्या में कृषक और अन्य नागरिक जिला मुख्यालयों पर राजकीय कार्यालयों में विभिन्न लाईसेंस, प्रमाणपत्रों को प्राप्त करने और अन्य प्रशासनिक कार्य जैसे पानी-बिजली के कनेक्शन, राजकीय कर्मियों की शिकायत या अन्य अभाव अभियोग के निराकरण हेतु राजकीय अफसरों और कर्मियों के चक्कर लगाते हैं और दलालों के माध्यम से रिश्वत देकर अपना काम कराते हैं या फिर शहरों में अनेक चक्करों के बाद निराश होकर बैठ जाते हैं। ऐसी स्थिति का निराकरण ग्रामीणों को संगठित करने में है। ग्रामीण युवा आगे आकर स्वैच्छिक संस्थानों की सहायता से या स्वप्रेरणा से अभाव-अभियोगों की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर राजकीय कार्यालयों में अधिकारियों से सीधी-सपाट बात करके उन्हें समय पर सही काम करने के लिए बाध्य कर सकते हैं। राजकीय कार्यालयों की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता लाने हेतु भी इस प्रकार ग्रामीणों का संगठित होना आवश्यक है। यदा-कदा अखबारों में समाचार पढ़ने को मिलता है कि समय पर समस्या की सुनवाई न होने से ग्रामीण नागरिकों ने बिजली, सिंचाई या जलदाय विभाग के इंजीनियरों का घेराव कर लिया या फिर थाने पहुंच कर पथराव कर दिया और पुलिस को आंसू गैस छोड़नी पड़ी या गोली चलानी पड़ी क्योंकि एफ.आई.आर. नहीं लिखी गई या संक्षेप में समस्या का समय पर निराकरण नहीं किया गया। भीड़ इसी प्रकार कानून हाथ में लेकर अपनी समस्या का समाधान ढूंढती रहेगी यदि ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत स्वयंसेवक या युवक अपनी जिम्मेवारी समझकर ग्रामीण समस्याओं के निदान हेतु आगे आकर ठोस कदम नहीं उठाते।

इसी प्रकार शहरों से जरूरत का सामान लाने में कितने ही लोगों का समय व शक्ति नष्ट होती है। बड़ी संख्या में ग्रामीणों के भरी बसों और टेंपों में शहर जाने से वहां का जन-जीवन प्रभावित होता है एवं शहर की समस्त सेवाओं की क्षमता पर विपरीत असर और बोझ पड़ता है। अत: ग्रामीण अपना सामान मंगाने के लिए ग्राम के विश्वसनीय चयनित युवाओं या शरीर से सक्षम व्यक्तियों को सामान की सूची और एडवांस धनराशि दे सकते हैं। विकल्प के रूप में स्वैच्छिक संस्थाएं अग्रिम के रूप में युवाओं को रिवाल्विंग फंड उपलब्ध करा सकती हैं और उनके लिए सेवाशुल्क भी निर्धारित कर सकती हैं ताकि ग्रामीण जन उनकी सेवाओं का फायदा उठा सकें।

बैंक से पेंशन या चैक/ड्राफ्ट आदि से नकद धन-राशि प्राप्त करने में ग्राम के वृद्धजन बहुधा अपने को असहाय महसूस करते हैं क्योंकि उनके अपने बेटे अथवा संबंधी फौज या शहरों में कार्यरत हैं और वे किस प्रकार शहर जाएं, यह अपने आप में समस्या बन जाती है। प्रशिक्षित युवक अन्य कार्य से शहर जाने के साथ-साथ वृद्धजनों को बैंक से धनराशि प्राप्त करने या अस्पतालों की सेवाएं प्राप्त करने में पर्याप्त सहायता कर सकते हैं। इसी प्रकार प्रसूति चैक-अप या प्रसव हेतु ग्रामीण महिलाएं भी अपने परिवार के पुरुषों की अनुपस्थिति में अन्य विश्वसनीय व्यक्तियों के सहारे की मोहताज रहती हैं। प्रशिक्षित युवक या अधेड़ पुरुष ग्रामजन का विश्वास प्राप्त करके उन्हें अस्पतालों से विभिन्न बीमारियों के निदान और इलाज हेतु सहायता दिलाने के लिए कृतसंकल्प हो सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में परस्पर सहायता कार्य को भारतीय परंपरा के अनुरूप एक परोपकारी या पवित्र कार्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। अपने ही ग्राम के बंधु-बांधवों या अन्य जाति/वर्ग के लोगों की सेवा आवश्यकताओं की आपूर्ति करना एवं सामाजिक सरोकारों से संबंध स्थापित करना मानवीय गुणों को विकसित करने में सहायक होगा। साथ ही प्रतिदिन बड़ी संख्या में ग्रामीणों के शहरों की ओर पलायन से उत्पन्न समस्याओं में कमी आएगी। शहरों में परिवहन सेवाओं, ठहरने के स्थलों और कार्यालयों, कचहरियों में प्रतिदिन एकत्र होने वाली भीड़ में कमी आएगी और राजकीय सेवाओं में उत्तरोत्तर पारदर्शिता की संभावनाएं बढ़ेंगी। ग्रामीण स्वयं एक-दूसरे का दुख-दर्द बांट सकेंगे, परस्पर सहायता के नए आयाम कायम होंगे और ग्रामीण स्वावलंबन की दिशा में अनेक संभावनाएं साकार होकर ग्रामीण विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकेंगी। ❑

(अध्यक्ष एवं प्रबंध संचालक, राजस्थान राज्य खनिज विकास निगम लि., जयपुर।)

स्वास्थ्य-चर्चा

'बायोकैमिक' द्वारा अपनी चिकित्सा आप करें

राम पुकार सिंह

'बायोकैमिक' चिकित्सा पद्धति के आविष्कारक, जर्मनी के ओलनबर्ग निवासी डा. विलियम हेनरिच शुश्लर ने सन 1837 में एक ग्रंथ की रचना कर सारी दुनिया का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। मनुष्य के मृत शरीर को जलाकर उसकी राख का परीक्षण कर उन्होंने पता लगाया कि उसमें कुल बारह लवणों की प्रधानता है। जीवित शरीर में किसी एक भी लवण की कमी से बीमारी हो जाती है। 'बायोकैमिक' चिकित्सा इन्हीं लवणों की आपूर्ति एवं संतुलन से सम्बद्ध है जिनका विस्तृत वर्णन इस लेख में किया गया है।

'बायोकैमिक' का अर्थ है जीव रसायन। इसका तात्पर्य हुआ जीवन के परिवर्तन से सम्बन्ध रखने वाला रसायन। इस चिकित्सा पद्धति के आविष्कारक जर्मनी के ओलनवर्ग निवासी डा. विलियम हेनरिच शुश्लर हैं। सन् 1837 ई. में एक ग्रन्थ की रचना कर उन्होंने सारी दुनिया का ध्यान इस ओर आकर्षित किया।

मनुष्य के मृत शरीर को जलाकर उसकी राख का परीक्षण करने पर पता चला कि उसमें कुल बारह लवणों की प्रधानता है।

जीवित शरीर में किसी भी एक लक्षण की कमी हो जाने पर बीमारी हो जाती है। अगर उस लवण की पूर्ति कर दी जाए तो बीमारी दूर हो जाती है।

मानव शरीर में लगभग 80 प्रतिशत जल, 15 प्रतिशत चर्बी तथा अन्य पदार्थ एवं 5 प्रतिशत लवण हैं। यद्यपि लवण की मात्रा कम है फिर भी स्वास्थ्य के लिए इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

'बायोकैमिक' में कुल बारह लवणों से सभी बीमारियों की चिकित्सा की जाती है क्योंकि शरीर के लिए ये बारह लवण आवश्यक हैं।

ये लवण सस्ते और सुलभ हैं तथा भारत में बनने लगे हैं। ये सभी को आवश्यकतानुसार प्राय: सभी अवस्थाओं में दिए जा सकते हैं। इनका स्वाद भी सामान्यत: अच्छा है।

ये दवाएं दाभमिक तथा भातमिक दोनों क्रमों में शक्तिकृत कर बनाई जाती हैं। दाभमिक का चिन्ह एक्स (x) है और भातमिक में सीधे संख्या लिखी जाती है। दाभमिक में 1 एक्स से 92 एक्स तक निम्नक्रम, 12 एक्स से 30 एक्स तक मध्य क्रम तथा 30 एक्स से 1000 एक्स तक उच्च क्रम की दवा कहलाती है। भातमिक में 1 से 30 तक निम्नक्रम, 30 से 1000 तक मध्य क्रम तथा 1000 से दस लाख तक उच्च क्रम की दवा मानी जाती है।

नई बीमारी (कम दिनों की) में निम्नक्रम तथा पुरानी बीमारी में उच्च क्रम की दवा इस्तेमाल की जाती है। बच्चों और बूढ़ों को प्राय: 3 एक्स या 30 एक्स तथा वयस्कों को 12 एक्स या 200 एक्स की दवा दी जाती है।

'बायोकैमिक' दाभमिक क्रम की दवाएं, जो छोटी-छोटी गोलियों में रहती हैं, उन्हें हल्के गर्म पानी के साथ खाया जाता है। प्राय: एक-एक ग्रेन की गोलियां बनी होती हैं। ये दवाएं अब पानी के रूप में भातमिक क्रम में मिलने लगी हैं।

दवा के मूल अर्क का चिह्न 'क्यू' (q) है। दवा के चुनाव में कई लक्षणों में सबसे प्रबल लक्षण के अनुसार दवा दी जाती है। एक साथ दो-तीन दवाएं भी मिलाकर दी जा सकती हैं या उन्हें थोड़ी-थोड़ी देर बाद पर्याय क्रम में भी दिया जा सकता है। प्राय:

म्यूर को म्यूर के साथ, फास को फास के साथ, सल्फ को सल्फ के साथ मिलाते हैं। पांचों फास का एक साथ व्यवहार टॉनिक (ताकतवर) दवा के रूप में होने लगा है। टेबलेट और घोल के रूप में ये दवाएं मिलने लगी हैं। सामान्य रूप में ये अनेक बीमारियों को दूर करती हैं।

एक छोटे कूट या काठ के बक्से में 'बायोकैमिक' की बारह दवाएं (जिनके नाम नीचे दिए गए हैं)। 3 एक्स, 6 एक्स, 12 एक्स, एवं 30 एक्स, 200 एक्स, 1000 एक्स, दस हजार एक्स और एक लाख एक्स की एक-एक औंस तथा चार औंस सुगर आफ मिल्क एवं चार औंस सुगर मिल्क ग्लोबुल्स एवं पांच दर्जन एक ड्राम की खाली शीशी प्रारम्भ में अपने पास रखकर सामान्य चिकित्सा प्रारम्भ की जा सकती है। पास में एक अच्छा थर्मामीटर तथा हो सके तो एक स्टेथेस्कोप भी रख सकते हैं।

शिशुओं को 1 ग्रेन की एक गोली, बच्चों को 2 ग्रेन, बालकों को 3 ग्रेन तथा वयस्कों को 5 ग्रेन तक दवा एक बार में सुसुम (गर्म) जल के साथ दें। ऐसे नहीं निगल सकें तो जल में घोल कर पिलाएं। विशेष स्थिति में जीभ पर रख कर या चूस कर भी खिला सकते हैं। दिन में तीन बार सामान्य रूप से दवा खिलाएं।

भयंकर स्थिति में एक-एक घंटे पर या आधे-आध घंटा पर भी दवा दे सकते हैं। जिस दवा में रोग और रोगी का लक्षण अधिक मिले उसी दवा को पहले व्यवहार में लाएं।

सामान्य लोगों की जानकारी तथा उपयोग के लिए 'बायोकैमिक' प्रसिद्ध बारह लवणों के नाम तथा गुण बारी-बारी से दिए जा रहे हैं। अपनी आवश्यकतानुसार लक्षण मिला कर दवा का चुनाव करें और विधिवत व्यवहार में लाएं। इससे जादू की तरह लाभ होता है। ये दवाएं होमियोपैथिक दवाखानों में खरीदी जा सकती हैं। अमेरिका, जर्मनी और इंग्लैंड की बनी दवाएं महंगी हैं। भारत में बनी दवाएं सस्ती हैं। दवा प्रयोग करते समय निम्नलिखित सावधानियां बरतें:—

- फेरमफास और साइलीशिया 12 एक्स में प्रयोग करें।
- कलकेरिया फास बूढ़े या बहुत कमजोर व्यक्ति को 12 एक्स में दें।
- साठ वर्ष या उससे अधिक उम्र वालों को 3 एक्स दें।
- 200 एक्स दिन में सिर्फ एक बार दें।
- एक हजार एक्स की दवा दो दिन बीच में छोड़ कर दें।
- दस हजार एक्स की दवा सप्ताह में एक बार तथा एक लाख एक्स की दवा पंद्रह दिनों पर एक बार दें।
- मूल अर्क (क्यू) दवा दिन में एक बार 5 से 10 बून्द तक थोड़े जल में मिलाकर प्रात:काल खाली पेट दें।

प्रयोग

1. कैलकेरिया फ्लोर : यह दवा किसी भी प्रकार की गिल्टी, गुहौरी, हड्डी के घाव, दांतों के सभी रोग, आंखों के सभी रोग, किसी भी प्रकार की सूजन, हाइड्रोसिल, हर्निया, बवासीर, गर्भाशय का स्थान से हट जाने में व्यवहार में लाई जाती है। यह कृमि रोगों, विशेषकर फीता कृमि को नष्ट करती है। थनैल, घेंघा, कैंसर, टानसिल बढ़ना और मोतियाबिन्द को दूर करने में लाभदायक है। एक औंस दवा 6x या 12x का दाम लगभग दस रुपये है।

2. कैलकेरिया फास : बल-बुद्धि, वृद्धि तथा बच्चों के विकास में सहायक, बच्चों के दांत निकलते समय की सभी गड़बड़ी (पतला दस्त, कफ), महिलाओं के प्रदर, प्रमेह, मूत्राधिक्य, सुगम प्रसव, रात्रि में पसीना देना तथा बच्चों के ब्रह्मतालु शीघ्र भरने में उपयुक्त है। सुखैनी रोग मिटाता, हड्डी मजबूत बनाता है। बच्चों का देर से चलना, देर से बोलना, मुंहासे दूर करने में उपयुक्त है। गर्भवती महिलाओं के लिए लाभदायक है।

3. कैलकेरिया सल्फ : रुके हुए कफ को निकालता है। घाव में पीव बनना रोकता है। घाव को शीघ्र सुखा देता है। श्रवणशक्ति का अकस्मात लोप हो जाना, सिर में घाव, कंठ में सूजन, मूर्च्छा और हड्डी के दर्द को दूर करता है। ज्ञान का अचानक लोप, जलोदर रोग में लाभदायक है।

4. फेरमफास : किसी भी बीमारी की प्रथमावस्था, सर्दी, बुखार, दर्द, लाल खून गिरना, सूजन और शोथ में, दर्द और जलन में, खून की कमी, चेहरा पीला, प्रलाप और भ्रम, आग से जलने पर, रात्रि में महिलाओं के हाथ-पांव में जलन के साथ दर्द, अनिद्रा, मानसिक असंतुलन, नाक से खून गिरना, चोट लगना, कहीं भी लाली, आंव में खून गिरना आदि में इसका व्यवहार होता है।

5. काली म्यूर : कफ, बुखार, किसी भी बीमारी की द्वितीय अवस्था में, गठिया, वातरोग, चर्मरोग, कर्कर रोग, (कैंसर) पेट की कृमि, धनुष्टंकार, डिफथेरिया, टॉनसिल, एग्जीमा, अकड़न में, यक्ष्मा, पांडुरोग, एड्स, प्लेग, गलशोथ, गर्मी, सुजाक, प्रदर, किसी अंग में किसी जगह सुरसुराहट,

चींटी जैसी चलने का अनुभव, खांसी, कान और आंख की तकलीफों में, घी या तेल की चीज खाने से पेट की गड़बड़ी में, चेचक, गंडमाला, खुजली, दिनाय, अपरस तथा कब्ज दूर करने के लिए उपयुक्त है।

6. कालीफास : किसी भी प्रकार की दिमागी कमजोरी, सिरदर्द, सिर में चक्कर आना, सिर में घुरमी, वायुगोला, धातुक्षीणता, मृगी, बेहोशी, कमजोरी, पुरुषार्थ में कमी, सिर का बाल झड़ना, सुनबहरी, नींद नहीं आना, प्रदर, लकवा, पागलपन, टाइफायड, स्मरणशक्ति का लोप, नामर्दी, संग्रहणी, चिड़चिड़ापन तथा गुल्म रोग में हितकारी है।

7. काली सल्फ : शरीर के जल को बाहर निकालता है। सुजाक, गर्मी, सिर में रूसी, प्राण शक्ति का लोप, स्वाद नष्ट, कखौड़ी, शरीर के मल को निकालता है। एक जगह से दूसरी जगह जाने वाली दर्द, बाल झड़ना, सिर दर्द, कान दर्द, गर्दन और कमर में दर्द, अजीर्ण, अनियमित मासिक धर्म, फोड़े की मवाद, पुराना जुकाम, नाक में कीड़े, भूख नहीं लगना, हैजा में लाभप्रद है।

8. मैगनेसिया फास : किसी भी प्रकार के दर्द, विशेषकर नस सम्बन्धी दर्द, ऐंठन, हकलाहट, अकड़न, हिस्टीरिया, कुकुर खांसी, अधिक डकार आना, भय, मूर्छा, मिर्गी, धनुष्टंकार, स्नायु रोग, माथा घुमना, सिर दर्द, खिंचाव, हिचकी, भूलना, भ्रम, दांती लगना, आंख फड़कना, यक्ष्मा, प्रसव-वेदना, मुंह में पानी भरना, आंखों में कांच आना, दाहिने भाग के दर्द में विशेष काम करता है।

9. नैट्रम म्यूर : सुखौनी, सर्दी, लू लगना, नमक अधिक खाना, कमजोरी, दिल की बीमारी, प्यास अधिक लगना, ओठ फड़कना, सिर में रूसी तथा खुजलाहट, कब्ज, राक्षसी भूख, आंख और नाक से पानी, छींक आना, किसी भी प्रकार के कीट दंभ, कुनैन सेवन से माथे का चक्कर, अनिद्रा, पागलपन, अधकपारी, बिजली का झटका लगना, महिलाओं की मासिक गड़बड़ी, परिपोषण शक्ति बढ़ाती है, हार्टफेल को रोकती है।

10. नैट्रम फास : पाचन सम्बन्धी किसी भी प्रकार की गड़बड़ी, पेट की कृमि, यकृत की खराबी, पीलिया रोग, यक्ष्मा, रात्रि में सोने पर दांत कट-कटाना, स्नान से अनिच्छा, नाक का अग्रभाग खुजलाना, खट्टी डकार, अपच, गैस्ट्रिक, घबराहट, भूलक्कड़पन, दृष्टिक्षीणता, बहुमूत्र, खट्टी वमन, जी मिचलाना, स्मरण शक्ति की कमी, दुर्बलता दूर करता है। दृष्टि-क्षीणता को हटाता है।

11. नैट्रम सल्फ : शरीर में जलवृद्धि होने पर उसे घटाता है। मलेरिया, फैलेरिया, फिलपौव, कालाजार, मधुमेह और लकवा रोग को दूर करता है। हैजा में भी गुणकारी है। दमा में लाभ, आत्महत्या की भावना को रोकता है। पेशाब में चीनी आना, यकृतवृद्धि, सिर में चोट से तकलीफ, तीता स्वाद, बिना पथरी, आंखें दु:खना, जलन, बहुमूत्र को रोकता है। मस्तिष्क की शिथिलता को दूर करता है।

12. साइलीशिया : नए घाव को शीघ्र दूर करता है। असमय बाल सफेद होने से रोकता है। हाथ-पैर से दुर्गन्ध युक्त पसीना रोकता है। शरीर में कांटा गड़ने पर उसे निकालता है, जीवन से निराश, अरुचि, आंखों पर गुठौरी, कान बहना, मांस बढ़ना, जननेन्द्रिय की खुजली तथा बालों का झड़ना रोकता है। प्रदर रोग को दूर करता है।

'बायोकैमिक' होमियोपैथी की ही तरह है। इसकी प्राय: सभी दवाओं को होमियोपैथी में अपना लिया गया है। होमियोपैथी का सिद्धांत है—

'सम: समं शमयति'। इसे 'सदृश विधान' कहा जाता है।

दिशा-निर्देश

- ज्वर के समय नैट्रम म्यूर का व्यवहार नहीं करना चाहिए।
- फेरम फास की निम्न शक्ति रात में ज्वर की अवस्था में रोगी को नहीं दें।
- यदि शरीर के किसी भाग से खून निकलता हो तो नैट्रम सल्फ रोगी को नहीं दें।
- काली म्यूर और कलकेरिया सल्फ एक साथ व्यवहार नहीं करें।
- प्रारम्भ में निम्न शक्ति की दवा प्रयोग में लाएं। फायदा नहीं होने पर शक्तिक्रम बढ़ाते जाएं। किसी रोग में दवा खाने के साथ लगाना भी हो तो एक ग्रेन दवा में दस ग्राम पानी, वेसलीन, जैतून का तेल, नारियल तेल या घी मिलाकर लगा दें।
- 'साइलीशिया' को किसी भी दवा के साथ मिलाकर प्रयोग कर सकते हैं।

भारत की वर्तमान परिस्थिति में 'बायोकैमिक' चिकित्सा पद्धति का ज्ञान सभी लोगों को रखना चाहिए। यह पद्धति सर्वसुलभ और हानिरहित है, अन्य चिकित्सा पद्धतियों से सस्ती भी है। ❑

(लेखक प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय, शाहपुर, पटोरी (समस्तीपुर), बिहार में प्राचार्य रह चुके हैं।)

नए प्रकाशन

जीवन के सात आध्यात्मिक नियम

पुस्तक का नाम : सफलता के सात आध्यात्मिक नियम; प्रकाशक : फुल सर्कल, 18-19, दिलशाद गार्डन, जी.टी. रोड, दिल्ली-110 095; पृष्ठ संख्या : 141; मूल्य : 75 रुपये।

भारतीय संस्कृति में अध्यात्म का विशेष महत्व रहा है। प्राचीन काल से ही हमारे ऋषि-मुनियों ने अध्यात्म द्वारा आत्मा-परमात्मा के संबंध को उजागर करने के प्रयास किए हैं। उन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप आज भी हमारे समाज में अध्यात्म की दिशा में सराहनीय योगदान करने वाले लोग विद्यमान हैं। ऐसा ही एक नाम डा. दीपक चोपड़ा का है। मानव शरीर और मानवीय क्षमता के क्षेत्र में दीपक चोपड़ा एक सुप्रसिद्ध नाम है। इनकी कई पुस्तकें अत्यधिक लोकप्रिय हुई हैं जिनमें 'एजलेस बॉडी', 'टाइमलेस माइंड', 'क्वांटम हीलिंग' और 'क्रीएटिंग एफलुएंस' शामिल हैं। इनकी पुस्तकों का 25 से अधिक भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

अपनी पुस्तक 'क्रीएटिंग एफल्यूएंस : वेल्थ कांश्सनैस इन दी फील्ड आफ आल पासिबिलिटीज' में उन्होंने भौतिक चेतना के लिए बढ़ने वाले कदमों की चर्चा करते समय प्रकृति की कार्यप्रणाली को मद्देनजर रखा। प्रस्तुत पुस्तक 'सफलता के सात आध्यात्मिक नियम' उसी का सारांश है। इसका अनुवाद विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक' ने किया है। लेखक ने पुस्तक की भूमिका में सफल जीवन की व्याख्या प्रसन्नता के अनंत विस्तार और भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति की सही समझ के रूप में की है। लेखक का कहना है कि सफलता और परिपूर्णता के प्रति हमें आध्यात्मिक दृष्टि रखनी चाहिए क्योंकि इससे हमारे सद्गुणों का विस्तार होगा और आध्यात्मिक नियमों के ज्ञान और पालन द्वारा प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करने से हम सहज, प्रसन्न और प्रेम से परिपूर्ण हो जाएंगे।

लेखक ने सफलता के सात आध्यात्मिक नियम बताए हैं। ये नियम हैं: 1. विशुद्ध सामर्थ्य का नियम; 2. समर्पण का नियम; 3. कर्म अथवा कारण एवं प्रभाव का नियम; 4. अल्प प्रयास का नियम; 5. आकांक्षा और इच्छा का नियम; 6. विरक्ति का नियम और, 7. धर्म अथवा जीवन के उद्देश्य का नियम।

लेखक ने विशुद्ध सामर्थ्य के नियम के अंतर्गत स्वयं को जानने पर जोर दिया है क्योंकि आप स्वयं ही वह अनंत संभावना हैं, आप स्वयं ही वह असीमित सामर्थ्य हैं, जो थी, है और रहेगी। 'आत्मा' अथवा 'आत्म निरीक्षण' के अनुभव का मायने यही है कि हमारी आंतरिक क्षमता हमारी आत्मा है, न कि हमारे अनुभव के तत्व। आत्मनिरीक्षण के विपरीत वस्तु निरीक्षण है। वस्तु निरीक्षण के समय बाहरी वस्तुओं अथवा तत्वों से प्रभावित रहने के कारण हमारा सोच-विचार और व्यवहार प्रतिक्रिया से प्रभावित होता है। इसलिए वह भय पर आधारित होता है। मौन, ध्यान और अनिर्णय के अभ्यास द्वारा आप विशुद्ध सामर्थ्य के नियम को प्राप्त कर सकते हैं।

सफलता का दूसरा आध्यात्मिक नियम 'समर्पण' है। इसे हम 'लेन-देन का नियम' भी कह सकते हैं क्योंकि पूरा ब्रह्मांड विस्तृत विनिमय पर ही आधारित है। प्रत्येक संबंध का आधार लेन-देन ही है। समर्पण द्वारा कुछ प्राप्त होता है और प्राप्त करने पर हम कुछ देने को तत्पर होते हैं। आपके समर्पण और ग्रहण करने के पीछे आपकी भावनाएं कैसी हैं, यह बात अत्यधिक महत्वपूर्ण है। भावनाएं सदैव ऐसी होनी चाहिए जिससे कि प्राप्त करने वाले और समर्पण

करने वाले दोनों ही व्यक्तियों को प्रसन्नता का अहसास हो। बिना किसी शर्त के और हृदय से दिया गया दान अधिक प्रसन्नतादायक ही सिद्ध होता है। समर्पण के नियम का अभ्यास बहुत ही सरल है। जो आप दूसरे से चाहते हैं, उसके प्रति वैसा ही व्यवहार करें।

तीसरा आध्यात्मिक नियम 'कर्म' का नियम है। कर्म में क्रिया और उसके परिणाम दोनों ही शामिल हैं, क्योंकि यही कारण और प्रभाव है। कर्म का नियम कोई नया नहीं है। सभी ने सुन रखा है कि जो आप बोते हैं, वही आप काटते हैं। अत: कर्म चेतन की क्रिया का चुनाव रूप है। आप और मैं निश्चय ही अनंत चुनावकर्ता हैं। वर्तमान में जो कुछ भी घटित हो रहा है, वह आपको रुचिकर लगे अथवा नहीं, यह उन्हीं चुनावों का परिणाम है, जो कभी आपने किए थे। जैसे ही आप कर्म के चुनाव के प्रति चेतन हो जाएंगे, वैसे ही आपके कर्म सही दिशा में कार्यान्वित होने लगेंगे। कर्म के नियम के अनुसार ऐसा कोई कर्म नहीं है जिसका फल न चुकाना पड़े।

सफलता का चौथा आध्यात्मिक नियम 'अल्प-प्रयत्न' का नियम है। यह नियम इस तथ्य पर आधारित है कि प्रकृति की बौद्धिकता प्रयत्नरहित सरलता और अत्यधिक आजादी से कार्य करती है। यही अल्पप्रयत्न अर्थात विरोधरहित प्रयास का नियम है। इसीलिए यह समन्वय और प्रेम का नियम है। जब प्रकृति के इस नियम को हम अपने जीवन में उतार लेते हैं तो सुगमता से हमारी इच्छाओं की प्रतिपूर्ति होने लगती है। अल्प प्रयत्न का विस्तार तब होता है जब आपके कर्म प्रेम से प्रेरित हों, क्योंकि प्रकृति का मूलाधार प्रेम ही है।

इस नियम के तीन तत्व हैं। पहला तत्व है स्वीकृति यानी अपनी परिस्थितियों और घटनाओं को ज्यों का त्यों स्वीकार करना; दूसरा, 'जिम्मेदारी' अर्थात 'उत्तरदायित्व' यानी किसी भी परिस्थिति अथवा घटना के लिए स्वयं को या किसी अन्य व्यक्ति को दोष न देना और तीसरा, अपना बचाव न करना। जब आप में स्वीकृति, उत्तरदायित्व और निर्विरोध का अद्भुत समन्वय हो जाएगा, तो आप जीवन का सहज आनंद उठा पाएंगे।

सफलता का पांचवा नियम 'आशय और इच्छा' का

सदस्यता कूपन

(नई सदस्यता/नवीनीकरण/पता बदलने के लिए)

मैं ..... का सदस्य बनने का इच्छुक हूं (पत्रिका का नाम एवं भाषा)

वार्षिक : 70 रुपये द्विवार्षिक : 135 रुपये त्रैवार्षिक : 190 रुपये

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर संख्या ..... तारीख .....

नाम :.....

वर्ग : छात्र/शिक्षक/संस्थान/अन्य

पता :.....

.....

.....

पिन ☐☐☐☐☐☐

नवीनीकरण/पता बदलने के लिए कृपया अपनी सदस्य संख्या लिखें ☐

पहली प्रति की प्राप्ति हेतु आठ से दस हफ्ते का समय दें।

इस कूपन को अलग कर इसे पिछली तरफ दिए गए पते पर भेजें।

नियम है। वर्तमान से मुक्त इच्छा द्वारा ही वस्तु, ऊर्जा, घटनाक्रम, जो चाहते हैं, का सही सामंजस्य संभव है।

छठा आध्यात्मिक नियम 'विरक्ति' का नियम है। विरक्ति के नियमानुसार भौतिक जगत में कुछ भी प्राप्त करने के लिए आपको विरक्ति का विकास करना चाहिए। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि आप इच्छाओं को ही दबा दें। आपको आकांक्षा और इच्छा का परित्याग नहीं करना है, बल्कि परिणाम के प्रति अपना ध्यान बनाए रखना है। विरक्ति के अभ्यास से कुछ भी पाया जा सकता है क्योंकि विरक्ति का आधार वह विश्वास है, जिसमें आप अपने सत्य रूप को पहचान जाते हैं। विरक्त रह कर ही व्यक्ति प्रसन्नता और सुख का अनुभव कर सकता है।

सफलता का सातवां आध्यात्मिक नियम 'धर्म' का है। 'धर्म' संस्कृत का शब्द है जिसका अर्थ है 'जीवन का उद्देश्य'। धर्म के नियमानुसार हमने किसी विशेष उद्देश्य के लिए यह भौतिक रूप धारण किया है। विशुद्ध सामर्थ्य उसका मूल तत्व है। धर्म के नियम के तीन तत्व हैं। पहला तत्व तो यही है कि इस जगत में हमें अपने आपको पहचानना है, यानी हम आत्मा हैं और हमने भौतिक रूप धारण किया है। धर्म का दूसरा तत्व वह है जिसके द्वारा हम अपने सद्गुणों को प्रकट करते हैं। धर्म के नियम का तीसरा तत्व मानवता की सेवा है। जब आप अपने गुणों को अभिव्यक्त करने की क्षमता को मानवता कल्याण के साथ जोड़कर देखते हैं तो आप धर्म के नियम का पालन करने योग्य हो जाते हैं।

लेखक ने प्रत्येक नियम को समझाने के लिए कई उद्धरणों एवं उदाहरणों से अपनी बात कहने का प्रयास किया है और इन नियमों के अनुपालन के लिए प्रत्येक नियम के बाद कुछ सुझाव दिए हैं ताकि इन नियमों का सुगमता से पालन किया जा सके। अंग्रेजी से अनुवादित यह पुस्तक 'अध्यात्म' जैसे गूढ़ विषय पर लेखक के विचार हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का सराहनीय प्रयास है। अनुवाद में सहजता और रिद्म है जो पाठकों की रुचि बनाए रखने में सक्षम है। फुल सर्कल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक का मूल्य 75 रुपये रखा गया है जो 'अध्यात्म' विषय में रुचि रखने वाले एक मध्यमवर्गीय पाठक के लिहाज से उचित ही है।

(समीक्षक : ललिता खुराना)

हम निम्न पत्रिकाएं दिल्ली से प्रकाशित करते हैं :

योजना (अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी और उड़िया) **कुरुक्षेत्र** (अंग्रेजी और हिन्दी) **आजकल** (हिन्दी और उर्दू)

योजना/कुरुक्षेत्र/आजकल के लिए सदस्यता शुल्क इस प्रकार है :

वार्षिक : 70 रुपये; द्विवार्षिक : 135 रुपये; त्रैवार्षिक : 190 रुपये

बाल भारती : वार्षिक 50 रुपये, द्विवार्षिक : 90 रुपये, त्रैवार्षिक : 135 रुपये

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवाएं

कूपन भेजने का पता है :

विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग (पत्रिका एकक), ईस्ट ब्लाक-IV लेवल-VII, आर.के. पुरम, नई दिल्ली-110066

सदस्यता के लिए आप हमारे इन विक्रय केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं :

पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली; सुपर बाजार, कनाट सर्कस, नई दिल्ली; हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली; राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई; 8 एस्पेलनेड ईस्ट, कलकत्ता; बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना; प्रेस रोड, तिरुअनन्तपुरम; 27/6 राम मोहन राय मार्ग, लखनऊ; कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई; राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद; प्रथम तल, 'एफ' विंग केन्द्रीय सदन कारोमंगल, बंगलौर।

पत्र सूचना कार्यालय के विक्रय केन्द्र

सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.); 80 मालवीय नगर, भोपाल-462003; के-21, नंदनिकेतन, मालवीय मार्ग, 'सी' स्कीम, जयपुर-302 003

विकास समाचार

कुष्ठ नियंत्रण के लिए विश्व बैंक ऋण

भारत में दूसरे चरण के राष्ट्रीय कुष्ठ रोग निवारण कार्यक्रम के लिए विश्व बैंक तीन करोड़ डालर (135 करोड़ रुपये) का ब्याजमुक्त ऋण प्रदान करेगा। भारत में शुरू होने वाले द्वितीय चरण के राष्ट्रीय कुष्ठ रोग निवारण कार्यक्रम पर चार करोड़ 22 लाख डालर का खर्च आएगा। इसमें से एक करोड़ 22 लाख डालर भारत सरकार खर्च करेगी। इस ऋण की वापसी सरकार द्वारा अगले 35 सालों के भीतर की जाएगी। योजना के दूसरे चरण में रोग के कारणों की पहचान, उपचार और राज्य-स्तर पर रोग फैलने से बचाव के उपायों पर जोर दिया जाएगा।

प्रबंधकीय पारिश्रमिक मामलों का निपटान

सरकार ने पिछले तीन वर्षों के दौरान कंपनी अधिनियम की धारा 269 और 309 के तहत प्रबंधकीय कार्मिकों की नियुक्ति और पारिश्रमिक के भुगतान के लिए 1350 आवेदनों को मंजूरी दी है। सरकार को ऐसे कुल 1462 आवेदन प्राप्त हुए थे। उसमें से 49 आवेदनों को विभिन्न कारणों से रद्द कर दिया गया। कंपनी कार्य विभाग ने दिसम्बर, 2000 में सीमा से अधिक प्रबंधकीय पारिश्रमिक की मंजूरी के लिए तर्कसंगत आवेदनों से संबंधित एक परिपत्र जारी किया था जिसका उद्देश्य प्रक्रिया को सरल बनाना, बेहतर पारदर्शिता लाना तथा आवेदन दाखिल करने में मुख्य विषय को शामिल करना, आदि था।

भारत और रूस द्वारा संयुक्त भूकम्प अनुसंधान

भारत और रूस भूकम्पों के बारे में संयुक्त अनुसंधान का कार्यक्रम शुरू करेंगे। दोनों देशों के बीच हाल ही में इस संबंध में आरंभिक विचार-विमर्श हुआ और संयुक्त परियोजनाएं शुरू करने की एक व्यवस्था बनाने का निश्चय किया गया।

विश्व-स्तर पर भारत के अलावा रूस और जापान सहित अनेक देशों के वैज्ञानिक भूकम्प आने की स्थिति और उन्हें समझने के बारे में विभिन्न अध्ययन कर रहे हैं। इनमें सेसमोलोजिकल, भू-भौतिकी, भू-रासायनिक, भूगर्भीय और जियोडेटिक अध्ययन शामिल हैं। साथ ही इनमें भूमंडलीय वातावरण में होने वाले परिवर्तनों, आदि का निरीक्षण भी सम्मिलित है। ऐसा इसलिए जरूरी है क्योंकि विश्व में कहीं भी वैज्ञानिक रूप से ऐसा सिद्ध तरीका नहीं है जिससे भूकम्पों के आने, उनके स्थल, समय और तीव्रता, आदि के बारे में सही भविष्यवाणी की जा सके।

कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम के दायरे में वृद्धि

केन्द्र सरकार ने कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम के अंतर्गत 20 या इससे अधिक लोगों को रोजगार मुहैया कराने वाले तीन और श्रेणियों के प्रतिष्ठानों को शामिल कर दिया है। ये प्रतिष्ठान हैं—कुरियर सर्विस से संबंधित प्रतिष्ठान, केन्द्र अथवा राज्य सरकार के स्वामित्व वाले वायुयान अथवा हवाई यात्रा के अलावा वायुयान या हवाई यात्रा सुविधा देने वाले प्रतिष्ठान, तथा साफ-सफाई सेवाओं से जुड़े प्रतिष्ठान।

पारेषण और वितरण क्षति में कमी के लिए संचालन समिति

पूरे देश में पारेषण और वितरण से होने वाली क्षति (बिजली की चोरी सहित तकनीकी और व्यापारिक क्षति) को लगभग 15 प्रतिशत की स्वीकार्य सीमा तक लाने में सहायता करने के लिए एक त्वरित विद्युत विकास कार्यक्रम के तहत एक संचालन समिति का गठन किया गया है। संचालन समिति परियोजना बनाने, कार्यान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन के लिए एक नियमावली बनाएगी, ठेका देने, विभिन्न उपकरणों/सामानों के तकनीकी विवरण, सूची नियंत्रण, अल्पावधि, मध्यावधि तथा दीर्घावधि उपायों को पूरा करने के लिए समय-सीमा तय करने की नियमावली तैयार करेगी, साथ ही विद्युत बोर्डों के कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने, कर्मचारियों के प्रत्येक स्तर के उत्तरदायित्व और कर्तव्य निर्धारित करने तथा आम उपभोक्ता में जागरूकता लाने के लिए भी एक नियमावली तैयार करेगी। नियमावली तीन महीने के अंदर तैयार कर लेना प्रस्तावित है।

सुरिंद्र कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110 001 से प्रकाशित एवं मुद्रित तथा तारा आर्ट प्रेस, बी-4, हंस भवन, बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110 002 में मुद्रित। दूरभाष : 3318626, 3319686
प्रधान संपादक : सुभाष सेतिया

रजि. सं. डी. एल. 12036/2001 लाइसेंस संख्या यू (डी.एन.)-53 डाक व्यय की पहली अदायगी किए बिना डाक में डालने के लिए लाइसेंस प्राप्त पंजी सं. 951/57
Reg. No. D.L. 12036/2001 R & Licence No. U (D.N.)-53 to post without pre-payment at DPSO, Delhi. R.N. 951/57

Information is Power : Be Informed.

Read YOJANA

A monthly journal, the only one of its kind, covering the whole gamut of development, socio-economic issues and current affairs.

Published in Assamese, Bengali, English, Gujarati, Hindi, Kannada, Malayalam, Marathi, Oriya, Punjabi, Tamil, Telugu and Urdu - reaching out to people country-wide.

Join the ranks of 5,00,000 discerning readers who opt for YOJANA.

YOJANA has incisive, authentic and well researched articles written by experts.

Have a cutting edge, be ahead of others. Subscribe today.

Subscription Rates : 1 Yr. - Rs.70/-; 2 Yrs. - Rs.135/-; 3 Yrs. - Rs.190/-.

Subscription by DD / MO / IPO in the name of Director, Publications Division, can be sent to :

The Advertisement & Circulation Manager, Publications Division, East Block-IV, Level-VII, R.K. Puram, New Delhi-110066. Tel. 6105590; Fax: 6175516 / 6193012.

Subscriptions will also be accepted at our sales emporia:

• Patiala House, Tilak Marg, **New Delhi**, Ph. 011-3387983; • Super Bazar, Connaught Circus, **New Delhi**, Ph. 011-3313308; • Hall No.196, Old Secretariat, **Delhi**, Ph. 011-3968906; • Rajaji Bhavan, Besant Nagar, **Chennai**, Ph. 044-4917673; • 8, Esplanade East, **Calcutta**, Ph. 033-2488030; • Bihar State Cooperative Building, Ashoka Rajpath, **Patna**, Ph. 0612-653823; • Press Road, **Thiruvananthapuram**, Ph. 0471-330650, • 27/6, Ram Mohan Rai Marg, **Lucknow**, Ph. 0522-208004; • Commerce House, Currimbhoy Road, Ballard Pier, **Mumbai**, Ph. 022-2610081; • State Archaeological Museum Building, Public Gardens, **Hyderabad**, Ph. 040-236393; • 1st Floor, F-Wing, Kendriya Sadan. Koramangala, **Bangalore**, Ph. 080-5537244; • C.G.O. Bhavan, 'A' Wing, A.B. Road, **Indore**; • 80, Malviya Nagar, **Bhopal**; • B-7/B, Bhawani Singh Road, **Jaipur**.

For Yojana Tamil, Telugu, Malayalam, Kannada, Gujarati, Marathi, Bengali and Assamese, please enrol yourself with Editors of the respective magazines at the addresses given below:

Editor, Yojana (Marathi), Room No.38, 4th Floor, Yusuf Building, Veer Nariman Road, **Mumbai**, Ph. 022-2040461;

Editor, Yojana (Gujarati), Ambika Complex, 1st Floor, Above UCO Bank, Paldi, **Ahmedabad**, Ph. 079-6638670;

Editor, Yojana (Assamese), Naujan Road, Uzan Bazar, **Guwahati**, Ph. 0361-516792;

Editor, Yojana (Bengali), 8, Esplanade East, Ground Floor, **Calcutta**, Ph. 033-2482576;

Editor, Yojana (Tamil), 'A' Wing, Ground Floor, Shastri Bhavan, **Chennai**, Ph. 044-8272382;

Editor, Yojana (Telugu), 10-2-1, F.D.C. Complex, AC Guards, **Hyderabad**, Ph. 040-236579;

Editor, Yojana (Malayalam), 'Reshmi', 14/916, Vazhuthacadu, **Thiruvananthapuram**, Ph. 0471-63826;

Editor, Yojana (Kannada), 1st Floor, 'F' Wing, Kendriya Sadan, Koramangala, **Bangalore**, Ph. 080-5537244.